०२·३
उपवास से
लाभ
आरोग्य मंदिर प्रकाशन

आरोग्य ग्रंथमाला-२

उपवाससे लाभ

[उपवास-विशेषज्ञोंके चुने हुए लेख]

संग्राहक

श्रीविट्ठलदास मोदी

आरोग्य मंदिर प्रकाशन

प्रकाशक
आरोग्य मंदिर प्रकाशन,
गोरखपुर

मुख्य विक्रेता
सस्ता साहित्य-मंडल,
नयी दिल्ली

प्रथम संस्करण	३००० :	सन् १९४७
दूसरा संस्करण	५००० :	सन् १९५०
तीसरा संस्करण	५००० :	सन् १९५३
चौथा संस्करण	५००० :	सन् १९५७
पांचवां संस्करण	५००० :	सन् १९६१
छठा संस्करण	५००० :	सन् १९६६
सातवां संस्करण	३००० :	सन् १९७३
आठवां संस्करण	२००० :	सन् १९७७
नवां संस्करण	३००० :	सन् १९७८
दसवां संस्करण	५००० :	सन् १९८२
ग्यारहवां संस्करण	५००० :	सन् १९८८
बारहवां संस्करण	५००० :	सन् १९९३

कुल--५१०००

मूल्य : २४.००

मुद्रक
अशोक मुद्रण गृह
५२/४२, ताशकंद मार्ग,
इलाहाबाद-२११००१

विषय—सूची

दो शब्द

उपवाससे लाभ होता है, इस बारेमें किसीको कुछ शक हो सकता है, पर इस पुस्तकके संग्राहकको तनिक भी नहीं है; क्योंकि उपवासपर उसकी श्रद्धा और विश्वास लोगोंकी कही-सुनी या सिर्फ पोथियोंमें पढ़ी बातोंपर निर्भर नहीं है, उसने खुद लंबे और संक्षिप्त उपवाससे बहुत फायदा उठाया है और हजारों को अपनी देखरेखमें उपवाससे अकथ लाभ होते देखा है।

प्राचीन ग्रंथोंमें भी रुग्ण दशाओंमें उपवास या लंघनका विधान मिलता हैं, पर विशेष करके तीव्र रोगों, ज्वर आदिमें। पुराने दबे हुए दमा, अपेंडिसाइटिस, आंव, संग्रहणी, कब्ज, बवासीर, गठिया आदि रोगोंमें उपवासका उल्लेख आयुर्वेद-ग्रंथोंमें शायद ही मिलेगा, पर आज तो ऐसे अनेकानेक रोग दावेके साथ उपवासकी मददसे निर्मूल किये जाते हैं।

हिन्दुस्तानमें आध्यात्मिक दृष्टिसे, मानस-शुद्धिके लिए उपवासमें विश्वास करनेवालोंकी तो कमी नहीं रही है, पर अन्य देशोंमें शारीरिक आरोग्यके विचारसे ही उपवास-चिकित्साका विकास हुआ है। उन देशोंमें कई उपवास-चिकित्सकोंने सहस्रों रोगियोंको उपवासद्वारा अकथनीय लाभ पहुँचाया है। इनमेंसे अनेकने अपने अनुभवके आधार पर बड़ी अच्छी-अच्छी पुस्तकें लिखी हैं। हम इस पुस्तकमें उन्हींमेंसे कुछका सारांश पाठकोंको भेंट कर रहे हैं। आशा है, इससे पाठकोंको उपवासकी महत्ताका सही अंदाज हो सकेगा।

भारतमें महात्माजी उपवासके महान् आचार्य कहे जा सकते हैं।

यद्यपि उनके अधिकतर उपवास आत्म-शोधन अथवा दूसरेकी विवेक-जागृतिके ख्यालसे हुए हैं, पर उपवासका शारीरिक लाभ भी महात्माजीके दृष्टिमें गौण नहीं रहा है। इस पुस्तकमें महात्माजीकी लेखनीसे जो दो-चार पृष्ठ हम दे पाये हैं, उनसे यह बात सिद्ध होती है। दूसरे लेखकोंकी पुस्तकोंका हमें सार देना पड़ा है, पर महात्माजीके लेखोंमें सार-ही-सार है। दूसरे वे लेख संक्षिप्त भी हैं, इसलिए ज्यों-के-त्यों दे दिये गये हैं।

महात्माजी रोगमें, शोकमें और अति हर्षकी दशामें भी उपवास करनेको कहते हैं। शोकमें न खानेका तो अनेक उपवास-विशेषज्ञोंका मत है, पर अति हर्षमें उपवास नयी-सी बात लगती है। जान पड़ता है कि महात्माजी चित्तकी असमताको दूर करनेके लिए उपवास आवश्यक समझते हैं। शरीरकी अस्वस्थावस्थामें चित्तकी समता बिगड़ जाती है और शोक तथा अति हर्ष तो मानसिक असमताका ही दूसरा नाम है। शरीर और मनको सम अवस्थामें लानेमें उपवास रामबाण है।

पर कोई यह न समझे कि, उपवाससे कभी हानि नहीं हो सकती। गंगा प्राणीको तारती है, पर कोई तैरनेकी कला जाने-सीखे बिना गहराईमें उतरता, है तो डूब जाता है। वैसे ही उपवासकी पूरी विधि जाने-समझे बिना लंबे उपवासका अवलंबन करनेवाला हानि भी उठा सकता है। समझ-बूझकर करें, तो लाभ-ही-लाभ है।

संग्राहक

उपवाससे लाभ

(१)

उपवाससे स्वास्थ्य

अप्टन सिंक्लेयर अमेरिकामें अंग्रेजीके प्रसिद्ध लेखक और उपन्यासकार हैं। उनके "दी जंगल", "आयल" (तेल) आदि उपन्यासोंकी अनेक आवृत्तियां हुई हैं। उनकी पुस्तकें अंग्रेजी पाठकोंमें बड़े चावसे पढ़ी जाती हैं। उन्होंने उपवास-चिकित्सापर भी एक पुस्तक लिखी है। पुस्तक उपयोगी एवं रोचक तो है ही, उसके लिखनेकी कहानी भी बड़ी मनोरंजक है। सिंक्लेयर महाशयको अपने जीवनके आरंभमें ही सात-आठ वर्षतक बहुत अधिक मानसिक कार्य करना पड़ा था। कई बार वह महीनोंतक नित्य चौदह-से-सोलह घंटेतक अपने उपन्यास लिखनेमें लगाते, जिसके फलस्वरूप उनकी तबियत खराब रहने लगी। बीमारीका कारण यह भी था कि कार्याधिक्यके सिवा उनका भोजन भी, चाय, शराब, तंबाकूका व्यवहार न करते हुए भी, सर्वथा अप्राकृतिक था और उन्हें समयपर भोजन करनेकी आदत भी न थी। धीरे-धीरे उनके सिरमें दर्द रहने लगा। सर्दी, जुकाम जल्द-जल्द होने लगा। आये-दिन गलेमें खराश हो जाती, टांसिल बढ़ जाते और बहुधा रातमें नींद उचट जाती। इन सब कारणोंसे उन्हें अपना सारा काम-धंधा बंद करके आराम करनेके लिए मजबूर होना पड़ता। धीरे-धीरे वह पूरे रोगी हो गये और स्वास्थ्य सुधारनेके उपायकी खोजमें लगे। समुद्रके किनारे गये, जी० एच० केलागके बैटलक्रीक

सैनिटोरियममें रहे, फ्लेचरके बताये अनुसार भोजन खूब चबा-चबाकर करते रहे, महीनों एक स्वास्थ्यप्रद स्थानमें रहकर सारा दिन टेनिस खेलने, तैरने और टहलनेमें बिताया। कितने ही डाक्टरोंसे स्वास्थ्य-परीक्षा करायी, दवाका सहारा भी लिया। जब-तब किसी चीजसे कुछ फायदा हो जाता। पर, शीघ्र ही उनकी हालत फिर पहले-जैसी हो जाती।

इस दशामें एक आरोग्य-निवासमें उनकी एक विशेष सतेज एवं सुन्दर महिलासे भेंट हुई। उस स्त्रीका स्वास्थ्य बहुत ही बढ़िया था, जो देखता, उसे, उसके स्वास्थ्यकी सराहनाकरनी पड़ती। परिचय बढ़ने पर सिंक्लेयरको ज्ञात हुआ कि इस स्त्रीको पंद्रह वर्षतक गठिया, नाड़ी-विकार, पुराना जुकाम, अग्निमांद्य आदि रोग तंग करते रहे हैं और उसने आठ दिनका एक उपवास करके अपने रोगोंसे मुक्ति पानेके साथ-साथ सौंदर्यका भी अर्जन किया है।

कानकी अपेक्षा आदमी आंखों देखी चीजपर अधिक विश्वास करता है। वह स्त्री अप्टन सिंक्लेयरको स्वास्थ्यका मूर्तरूप दिखाई दी और उन्होंने अपने रोगोंसे मुक्ति पानेके लिए उपवास शुरू किया, जो उन्होंने बारहवें दिन संतरेके रससे तोड़ा। उसके बाद दुग्ध-कल्प किया, जिसमें वे नित्य आठ सेर दूध पीते रहे। यह कल्प अट्ठाइस दिन चला। बारह दिनके उपवासमें उनका वजन सत्रह पौंड घटा था, अट्ठाइस दिनके दुग्ध-कल्पमें यह वजन बत्तीस पौंड बढ़ा।

उपवासमें सिंक्लेयरको कोई तकलीफ नहीं हुई। केवल दोपहरको थोड़ी कमजोरी प्रतीत होती, जो साधारण स्नानसे चली जाती। भूख तीसरे दिन ही बंद हो गयी थी, अतः उसका तो कोई कष्ट ही नहीं था।

इस उपवास और दुग्धाहारका फल यह हुआ कि उनका दुबला, सूखा शरीर भरकर चमकने लगा।

पर इतनेसे उन्हें संतोष नहीं हुआ। सिंक्लेयर लिखते हैं--"मैंने बारह दिनका जो उपवास किया, वह 'पूर्ण उपवास' नहीं था अर्थात् मैंने इसे अपने-आप भूख जाग्रत होनेतक नहीं चलाया, इसलिए मैंने फिर

उपवास आरंभ किया। मेरी इच्छा इस दूसरे उपवासको भी ज्यादा दिनतक चलानेकी नहीं थी, पर उपवास आरंभ करनेपर भूख फिर बंद हो गयी और ताज्जुब यह था कि कमजोरी-सी प्रतीत नहीं होती थी। मैं नित्य ठंढे पानीसे नहाता था और सारे शरीरको दिनमें दो बार अच्छी तरह हथेलीमें ठंढा पानी लगाकर रगड़ता था। सबेरे रोज चार मील टहलता था और थोड़ी कसरत भी करता था। इससे मुझे कोई कष्ट नहीं होता था। कभी-कभी जरा ठंढक जरूर मालूम होती थी, तभी मुझे याद आता था कि मैं उपवास कर रहा हूँ। आठ दिनके उपवासमें मेरा वजन नौ पौंड घटा। पर, इसके बाद ही मैं सप्ताहभर संतरा और अंजीर खाकर रहा, जिससे मेरा घटा हुआ वजन बहुत-कुछ पूरा हो गया।

इस उपवासके बाद बहुत दिनोंतक सिक्लेयर साहब केवल फल और मेवोंका भोजन करते रहे और भी अनेक खाद्योंके अनुभव करते रहे। उपवासपर इन्होंने अपनी आस्था इस प्रकार प्रकट की है-

"उपवासको मैं जवानीकों कायम रखनेकी कुंजी समझता हूँ। उपवास पूर्ण एवं स्थायी स्वास्थ्यका दाता है। अपने उपवास-संबंधी ज्ञानको मैं संसारकी सभी मूल्यवान् वस्तुओंसे अधिक मूल्यवान् समझता हूँ। उपवास प्रकृतिकी स्वास्थ्य-संरक्षक विधि है जिसके द्वारा प्रकृति हमें रोगोंसे बचाती है। मेरे कहनेका यह मतलब बिलकुल नहीं है कि मुझे चेचक या मियादी बुखार-सरीखे भयंकर रोग कभी नहीं हो सकते। मैं एक कसरती प्राकृतिक चिकित्सकको जानता हूँ, जो समय-समयपर मियादी बुखार पैदा करनेवाले कीटाणु पीकर देखा करते हैं कि उनका शरीर निर्विकार है तो? पर मुझे इस हदतक जानेकी जरूरत नहीं है। मुझे इतनेसे ही संतोष है कि ऐसे तीव्र और जीर्ण रोग, जिनसे लोग अक्सर पीड़ित रहते हैं, मुझसे दूर चले गये हैं और जबतक मैं अपने इस इरादेपर कि जरा भी तबियत खराब होते ही, जुकाम होनेपर, सिर-दर्द होनेपर, थकान प्रतीत होनेपर, जीभ गंदी दिखाई दिखाई देनेपर या अंगुलीके कटनेसे हुए घावके जल्द न सूखनेपर उपवास शुरू कर दूंगा, अटल रहूंगा, मुझे कोई जीर्ण रोग होनेकी

संभावना नहीं है।"

सिंक्लेयरके उपवास और उससे प्राप्त लाभके बारेमें उनके मित्रों और संबंधियों ने भी सुना और उनकी सलाहसे छोटे-बड़े उपवास किये। उनकी स्त्रीने कमजोरी, वजनकी कमी, नाड़ी-दौर्बल्य और पाचनकी गड़बड़ीके लिए उपवास किया। उनके एक मित्रने दमे और जलोदरसे उपवासद्वारा मुक्ति पायी। एक दूसरे भाईने अपेंडिसाइटिसके दौरेके समय उपवास करके उसे दूर किया। इसी प्रकार एक स्त्रीने, जिसके स्वभावमें कार्याधिक्यके कारण चिड़चिड़ापन आ गया था एवं शरीरकी हड्डियां कमजोर हो जानेके कारण चलना कठिन था, एक जवानने, जिसकी रेल लड़नेकी वजहसे छातीकी कई हड्डियां टूट गयी थीं एवं फेफड़ेके ऊपरका चमड़ा छिल गया था, एक महिलाने, जिसे अग्निमंदता एवं गठियाकी शिकायत थी, एक पादरी महाशय जो जन्मसे पेटकी गड़बड़ीसे पीड़ित थे एवं जिनका आमाशय एवं आंतें जगहसे हट गये थे, उपवास किया और अपने-अपने रोगोंसे मुक्ति पायी।

अपने इन मित्रोंके तथा और भी अन्य रोगियोंके उपवासके अनुभव सिंक्लेयरने एक पत्रिकामें प्रकाशित कराये, जिसके फलस्वरूप सात-आठ सौ ऐसे पाठकोंने उन्हें पत्र लिखे कि, जिन्होंने उनका लेख पढ़कर उपवास किया था अथवा करना चाहते थे। आये हुए पत्रोंमें निम्न प्रश्नोंपर विशेषतया प्रकाश डालनेकी प्रार्थना की गयी थी।

१. उपवासका अंत कब करना चाहिए?

२. क्या फलाहार या अल्पाहारसे उपवासका काम निकल सकता है?

३. उपवासमें जल कितना पीयें एवं अन्य कौन-से प्रयोग करें?

४. उपवास किस भोजनसे तोड़ा जाय?

५. किन-किन रोगोंमें उपवास किया जाय?

इनका उत्तर सिंक्लेयरने यों दिया है--

१. साधारणतः कहा जाता है कि उपवासके बाद भूख लौटनेपर ही उपवास तोड़ना चाहिए, पर मैंने कभी ऐसे उपवास नहीं किये, इसलिए ऐसा उपवास करनेकी राय देनेमें झिझकता हूँ। दो बार मैंने बारह-बारह दिनोंके उपवास किये और ये उपवास कमजोरी मालूम होनेपर मैंने तोड़ दिये। भोजन आरम्भ करनेपर भूख स्वयं लौटी। सिर-दर्द, उदर-विकार, जुकाम, गलेकी खराश तथा साधारण रोगोंके लिए एक छोटा उपवास काफी है। गठिया, लीवरकी खराबी, कैंसर-सरीखे पुराने एवं जड़ जमाये रोगोंमें बड़े उपवास ही करने चाहिए। यदि उपवासमें कष्ट न हो, तो उसे बढ़ाया जा सकता है, पर उपवास करनेके पूर्व कभी यह निश्चय नहीं करना चाहिए कि मैं कोई लंबा-तीस-चालीस दिनका उपवास करूंगा।

२. छोटे-छोटे उपवास करना या थोड़ा खाकर रहना अथवा केवल फल खाकर रहना मैं निजी तौरपर कठिन समझता हूँ। उपवासकी तकलीफ तो पहले दो दिनोंतक ही रहती है, जबतक कि भूख लगी रहती है, पर अल्पाहारमें भूखका कष्ट हमेशा बना रहता है। मैं कई बार हफ्तों फलपर रहा हूँ, उस दशामें अधिक कमजोरी आती है, उठना भी कठिन हो जाता है। ऐसी कमजोरी उपवासमें कभी नहीं आती।

३. उपवास-काल में जितना बन सके, उतना पानी पीना चाहिए, पर एक बारमें अधिक पानी न पीया जाय। मैं हर घंटेपर और कभी-कभी आध घंटेपर पावभर पानी पीता हूँ। उपवासके आरम्भमें भोजनका समय होनेपर पेटभर पानी पी लेना चाहिए, इससे भूख नहीं सताने पाती। गरम पानीकी बनिस्बत ठंढा पानी सरलतासे मिल सकता है, अतः मैं ठंढा पानी ही पीना पसन्द करता हूँ, पर किसीको गरम पानी मिलनेकी सुविधा हो, तो वह गरम पानी पी सकता है।

उपवास-कालमें नित्य स्नान करना चाहिए। मैं थोड़े गरम पानीसे नहानेके बाद तुरंत ठंढे पानीसे नहाना पसंद करता हूँ। नित्य थोड़े-पानीका एक एनिमा लेना आवश्यक है। मेरा काम साधारणतया आध सेर ठंढे

पानीसे मजेसे चल जाता है। उपवासमें कुछ खाया नहीं जाता, अतः मल नहीं बनता। पर, लोगोंके पेटमें पुराना मल अत्यधिक मात्रामें पड़ा रहता है, उसे एनिमाद्वारा निकालनेकी बहुत जरूरत होती है।

४. अपने उपवास तोड़नेके बारेमें मैंने लिखा है कि मेरा निजी अनुभव यह है कि यदि उपवासके तुरंत बाद दुग्ध-कल्प किया जाय, तभी वह सफल होता है। पर तीन-चार दिनके उपवासके बाद दुग्ध-कल्प नहीं चलता, न लम्बे उपवासके बाद कुछ दिन इधर-उधरकी चीजें खाते रहनेके बाद। दुग्ध-कल्पमें जितना दूध पिया जाता है, वह शरीर-तंतुओंके बहुत अधिक दुर्बल हो जानेके बाद ही चल पाता है। मेरी ही भांति अनेक मित्रोंका भी यही अनुभव है।

उपवासके बाद जिस चीजपर मन चले, उससे उपवास तोड़ना गलत है। एक बार मैंने तथा दो-तीन आदमियोंने उपवासके बाद खानेके मामलेमें मनमानी की, जिससे बहुत अधिक कष्ट उठाना पड़ा।

उपवास-कालमें पाचन-शक्ति मंद पड़ जाती है एवं आंतें भी अपना काम छोड़े रहती हैं, अतः शुरूमें आसानीसे पचनेवाले खाद्य ही लेने चाहिए और जबतक पेट स्वयं न साफ होने लगे, एनिमा लेते रहना चाहिए। पहले दो-तीन दिन संतरे या अंगूरका रस थोड़ी-थोड़ी मात्रामें लेते रहकर फिर दूधके आहारपर आ जाना चाहिए। यदि दूध मुआफिक न आये, तो धीरे-धीरे भुना आलू, भात, दलिया आदि लेना चाहिए और ऐसी हालतमें नित्य एनिमा लेना न भूलना चाहिए।

५. आमाशय एवं आंतके रोगोंके लिए उपवास बहुत लाभदायक है। पेटमें पड़े सड़ते भोजनसे उत्पन्न विषके रक्तमें पहुँचनेके कारण होनेवाले सिरदर्द, गठिया, तिल्ली और जिगरके रोगमें भी उपयोगी है। शरीरके गंदे रहनेके कारण कीटाणुओंद्वारा उत्पन्न सभी रोगों एवं ज्वर आदिमें भी उपयुक्त हैं।

उपवास और शक्तिका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह सोचना गलत है कि जब शक्ति होगी, तब उपवास करेंगे। रोगने जितना ही आपको कमजोर बना दिया है, उतनी ही आपको उपवासकी आवश्यकता है। कमजोरीका

यह स्पष्ट अर्थ है कि जो भोजन आप कर रहे हैं, उसे पचानेकी आपके शरीरमें शक्ति नहीं है। इस समय यदि आप उपवास करेंगे, तो आपमें कमजोरीके बदले शक्ति आयेगी। उपवास-कालमें थकी हुई पाचन-प्रणालीको आराम मिलता है और वह कामसे छुट्टी पाकर आरामकी नींद सोती है।

उपवास रोगोंको दूर करनेके लिए प्रकृतिकी एकमात्र दवा है। यह मत सोचिए कि अगले सप्ताह उपवास आरम्भ करेंगे या घर चलकर उपवास शुरू करेंगे। रोग आ गया है, तो तुरन्त उपवास शुरू कर दीजिए। यदि आपका काम सर्वथा मानसिक नहीं है, तो काम करते हुए भी उपवास करना आसान है।

उपवासके बाद भोजन क्या हो ? इस सवालके जवाबमें सिंक्लेयर साहब कहते हैं कि, यह मनुष्यको स्वयं अपने अनुभवसे जानना चाहिए। वह स्वयं इसी प्रश्नके उत्तरके लिए एक सप्ताहतक फलपर रहे और एक सप्ताहके बाद गेहूँ खाकर तथा तीन सप्ताह केवल दूध पीकर और इतने ही समय केवल मांस खाकर।

उनकी पक्की राय है कि जिन खाद्योंमें शराब या सिरका हो, जिनमें चीनी मिली हो, मैदेकी चीज-चाहे कैसी भी मोहक क्यों न हो और तली हुई कोई चीज न खानी चाहिए। दूधका प्रयोग भी वह अच्छा नहीं समझते। दूध केवल दुग्ध-कल्पके समय ही पीना चाहिए। फलोंको वह बहुत अच्छी चीज नहीं समझते और मूंगफली इसलिए नहीं खाते कि वह उन्हें पचती नहीं। वह कहते हैं कि, किसीको केला नहीं पचता, तो किसीको छेना। कोई तेलसे घृणा करता है, तो कोई किसी दूसरी चीजसे। इसलिए भोजनके सम्बन्धमें सबको अपनी रुचि और अनुभवसे काम लेना चाहिए।

उपवास तोड़नेके लिए सन्तरेके रसको वे आदर्श मानते हैं और कहते हैं कि उपवासके बाद कुछ समयतक भोजनकी बहुत-थोड़ी मात्राकी जरूरत रहती है, अतः स्वादके वशीभूत न होकर भूखके अनुसार ही भोजन करना चाहिए।

(२)

नाश्तेका उपवास

अमेरिकामें डॉ० एडवर्ड हूकर डेवी, एम० डी० एक नामी डाक्टर हो गये हैं। प्रसिद्ध वह अपनी डाक्टरीके कारण नहीं, अपने उपवास-सम्बन्धी विचारों एवं उनके प्रचारके कारण हुए। उन्होंने एक तरहसे एक पंथ ही चला दिया, जिसका नारा था, "नाश्ता छोड़ो" अर्थात् प्रत्येक स्वस्थ व्यक्तिको एवं रोगीको भी दोपहरतक कुछ नहीं खाना चाहिए। रातमें सोनेसे जो शक्ति मिलती है, उसीसे काम लो और दोपहरतक पेटको आराम करने दो। पचानेके काममें शरीरकी पूरी शक्ति खर्च होती है, उसे जहाँतक हो सके, बचाओ।

डॉ० डेवीने जब जवानीमें अपनी प्रैक्टिस आरम्भ की, तो देखा कि नये-पुराने सभी डाक्टर एक ही रोगके लिए रोगियों को भिन्न-भिन्न दवाएं देते हैं और रोगी सबसे समान अनुपातमें मरते-जीते हैं। डाक्टरी चलना भी किसी विशेष योग्यतापर निर्भर नहीं है, अमुककी इसलिए चलती है, क्योंकि वह स्त्री है, अमुककी इसलिए कि वह एक विशेष परिवारमें पैदा हुआ है। दवा और रोगके निवारणके सम्बन्धमें, जब वह अपने गाँवमें बीमार पड़नेवाले रोगियों, उनकी दवा एवं अनुपातात्मक मृत्युको लेकर विचार करने लगे, तो दवापर इनकी आस्था विशेष रूपसे डगमगाने लगी। वह शहर नहीं गांवके रहनेवाले थे और उनका गांव बहुत बड़ा था। वहाँ उन्होंने देखा था कि जब कोई बीमार पड़ता है, तो गांवके लोग ही जो-सो

ओषधिके रूपमें दे देते हैं और लोग उसीको लेकर जीते या मरते हैं--और जब वहाँ मरनेवाली संख्या डाक्टरोंके हाथों मरनेवाली संख्यासे उन्हें अधिक नही दिखाई दी, तो उनके मनमें यह प्रश्न उठने लगा कि दवा क्यों ?

उसी समय उन्हें एक बहुत गरीब किसानकी एक वयस्क बीमार लड़कीको देखनेका मौका मिला। उसने अपने रोगकी पीड़ाके कारण तीन सप्ताहसे पानीतक नही पीया था। दवा तो उसे देता ही कौन ? और उसे पचता भी कुछ नहीं था। कई दिनों बाद पानी पचा और रोगीके चेहरेपर चमक लौटी। धीरे-धीरे उसका मस्तिष्क अधिक सतेज हो गया, त्वचा निखर आयी और उसकी शक्ति बढ़ती हुई प्रतीत हुई। प्रकृतिकी यह करामात डॉ॰ डेवीके लिए बड़ी आश्चर्यकर थी। उन्होंने रोगीको प्रकृतिपर ही छोड़ दिया और उन्हें दो-चार दिनोंमें ही यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि रोगीकी गंदी जीभ दूध पीते बच्चेकी जीभकी तरह साफ हो गयी, सांस, जो बराबर बदबूदार रहा करती थी, ठीक हो गयी। ठीक पैंतीसवें दिन रोगीको भूख जागी। रोगसे पूरी निवृत्तिका यह चिह्न था। उसका ज्वर बिल्कुल चला गया था, नाड़ीकी गति भी सम हो गयी थी। इस समय रोगीने डाक्टरकी नहीं, भोजनकी मांग की।

डॉ॰ डेवीने इसके पहले, इतना खराब मरीज नही देखा था। रोगीको खिलाते-पिलाते रहने एवं भोजन पेटमें रुकते रहनेपर भी अक्सर जितने रोगी इतने समयमें दुबले हो जाया करते हैं, वह स्त्री उससे अधिक दुबली नही हुई थी। भोजन कुछ नहीं, आवश्यकता होनेपर केवल पानी पिया जाता और रोगिणी अपने-आप स्वस्थ हो गयी। डॉ॰ डेवीके लिए यह अजीब समस्या थी। वह सोचने लगे कि यदि रोगिणीको मैंने दवा दे दी होती तो ? और वह मर जाती तो ? क्या मैं उसकी हत्या करनेका जिम्मेदार नहीं ठहरता ? सभी डॉक्टर रोगीको 'खिलाओ-पिलाओ' पुकारते रहते हैं। उनकी किताबें कहती हैं कि, इसी प्रकार रोगीकी शक्ति कायम रह सकती है और वह जिंदा रह सकता है, पर यहाँ तो प्रकृतिने मनुष्यके अनुभव और उसके रिवाजपर पानी ही फेर दिया ! बिना भोजनके

रोगिणीकी शक्ति कायम रही और रोग स्वतः अच्छा होता रहा।

इस वक्तसे डॉ० डेवीने किसी खास रोगके लिए दवा देनी बंद कर दी। केवल कहीं कोई दर्द वगैरह हुआ, तो उसे शांत करनेके लिए और यदि पेट गड़बड़ हुआ, तो उसे साफ करनेके लिए दवा देते रहे। भोजनके नामपर माड़ या पतली दलिया बताते रहे। दूध तो वह बिलकुल बंद कर देते थे। रोगीको कुछ देनेकी उनकी इच्छा ही नहीं होती थी। यह सब वह रोगीके घरवालोंकी तसल्लीके लिए बताते थे।

लगभग इसी समय उनके घरके आस-पास डिप्थीरियाका प्रकोप हुआ, जिससे उनके पड़ोसीके कई बच्चोंकी मृत्यु हो गयी। उनके बच्चेको भी डिप्थीरिया हो गया। उस बच्चेको उन्होंने बड़े लाड़-प्यारसे पाला था। उसे दवा दें कि न दें? यहीं उनके दवा-संबंधी नये विचारोंकी आजमाइश होनेवाली थी। अचानक उन्हें उसी समय एक रोगीको देखने जाना पड़ा। देर होते देखकर उनकी स्त्रीने दवा मंगाकर उस बच्चेको एक खुराक पिला ही दी। लौटनेपर डॉ० डेवीने देखा कि जितनी दवा उनके बच्चेको दी गयी थी, वह एक घोड़ेको देनेके लिए काफी है। खैर, उन्होंने उसी समयसे दवा बंद की और उसकी मांको भुलानेके लिए बच्चेको दवाके नामपर थोड़ा रंगीन पानी देते रहे और प्यास लगनेपर सादा पानी पिलाते रहे। उनके सारे डॉक्टर मित्रोंने उनके इस 'दुराग्रह' का मिलकर विरोध किया, पर डॉ० डेवी अपने मतपर अटल रहे। ईश्वरकी कृपासे बच्चा अच्छा हो गया और उनके 'रोगमें उपवास' संबंधी विचारोंने गहरी जड़ पकड़ी।

अब डॉ० डेवी धड़ल्लेसे अपने रोगियोंपर उपवास और पानी आजमाने लगे और उन्हें स्वस्थ करने लगे। पर, उपवास और पानीसे रोगी अच्छे कैसे होते हैं, यह उनकी समझमें न आता था। अब भी वह सोचते थे कि बिना भोजनके रोगी जीता कैसे है, उसकी चेतना अंततक कैसे बनी रहती है? यह रहस्य तब खुला, जब उन्हें नीचेकी तालिका मिली। यह तालिका यह बताती है कि भूखसे मरनेवाले प्राणीके शरीरके तत्व किस

अनुपातमें छीजते हैं : --

बसा	९७ प्रतिशत
पेशियां	३० "
यकृत	५६ "
प्लीहा	६३ "
रक्त	१७ "
नाड़ियां	० "

उससे डॉ० डेवीकी समझमें आया कि जरूरतके लिए मनुष्यके शरीरमें बहुत-सा भोजन इकट्ठा रहता है और उन्होंने यह भी जाना कि क्यों मनुष्यकी चेतना अंततक बनी रहती है । नाड़ी-जाल, जिसकेद्वारा सारे शरीरके सारे कार्योंका परिचालन होता है, जिसके मुख्य केंद्रको मस्तिष्क अथवा चेतनाके नामसे भी पुकारते हैं, मरते दमतक उसके एक अंशका भी नाश नहीं होता और न होता है नाश उसकी कार्य--शक्तिका । मस्तिष्कको किसी भोजनकी जरूरत नहीं है और न पोषण उसे उन खाद्योंसे मिल ही सकता है, जो रोगीको रोगकी अवस्थामें खुराकके तौरपर दिये जाते हैं ।

डॉ० डेवी समझ गये कि आदमी भोजन बिना दिनों नहीं, सप्ताहों और महीनों नहीं मर सकता और साधारणतः जितने दिनों तीव्र रोग चला करते हैं उनसे बहुत अधिक दिनोंतक मनुष्य भोजन-बिना रह सकता है ।

धीरे-धीरे उनके विचार शृंखला-बद्ध हो गये और अपने विरोधी डाक्टरोंको जवाब देनेके लिए उन्होंने उन्हें शरीर-शास्त्र-संबंधी तथ्योंके आधारपर सुसज्जित किया ।

"मस्तिष्क शरीररूपी मशीनका शक्ति-केंद्र है--शरीरकी प्रत्येक शक्तिका स्रोत । शरीरके सारे कार्य उससे मिलनेवाली शक्तिसे ही चलते हैं। हमारा सोचना, प्यार, घृणा अथवा प्रशंसा करना, हाथोंसे काम लेना, चखना, सुनना, महकना, देखना और अनुभव करना-यह सब

मस्तिष्कद्वारा ही होता है । मस्तिष्कसे मिली शक्तिसे ही ये सब काम संपन्न होते हैं । मस्तिष्क अथवा नाड़ी-जाल ही शरीरकी टूटी हड्डियोंको जोड़ता है, वही घावोंको भरता है और रोगोंको दूर करता है । शरीरके सभी आवश्यक अंग एवं मांस पेशियोंको मस्तिष्क ही चलाता है । पाचन-प्रणाली शरीरका अत्यावश्यक अंग है और इसका सारा काम मस्तिष्कके भरोसे ही होता है । जो आश्चर्यजनक शक्ति हमें शरीरके अस्थिपुंज, स्नायुओं, मांसपेशियों या नसोंमें दिखाई देती है, वह उसकी नहीं है, वह उनको मस्तिष्कसे ही मिलती है । यह सभी जानते हैं कि जब हाथ अथवा पैरसे संबंधित नाड़ीका, नाड़ी-जालसे संबंध-विच्छेद हो जाता है, तब उसके हिलाने-डुलाने अथवा स्पर्शकी शक्ति चली जाती है और इसी प्रकार यदि आमाशयसे संबंधित नाड़ीको काट दिया जाय, तो पाचन-क्रिया भी बंद हो जायेगी । तो साधारणतः यह कहा जा सकता है कि शक्ति शरीरकी नहीं, सीधे-सीधे मस्तिष्ककी है ।

"अतः भोजनके एक अणुको भी पचानेके लिए जिस शक्तिकी जरूरत होती है, वह मस्तिष्कसे ही मिलती है । भोजनसे ही यदि शक्ति मिलती होती, तो कामकी थकानको दूर करनेके लिए आराम नहीं, भोजनकी जरूरत होती, पर मनुष्य सोकर उठनेके बादसे प्रतिपल थकता ही जाता है और अंतमें उसे ऐसी थकान आती है कि उसे पड़कर सो ही रहना पड़ता है! यदि मनुष्य रातको न सोये तो क्या इसकी पूर्ति संसारका कोई भी भोजन कर सकता है ? यह सर्वविदित है कि शारीरिक श्रमके बाद आयी थकान आराम करनेके बाद ही जाती है ।"

"मस्तिष्कको भोजन अपने-आपसे मिलता है और वह अपनी खोयी शक्ति आराम और निद्रासे पूरे तौरपर प्राप्त कर लेता है । शरीरकी कोई क्रिया, चाहे वह कितनी ही छोटी क्यों न हो, कोई विचार, चाहे उसमें कितना ही कम समय क्यों न लगे, उसमें लगनेवाली शक्ति मस्तिष्ककी ही होती है । भोजन कितना ही थोड़ा क्यों न हो, मस्तिष्ककी ही शक्तिसे पचता है ।"

"भूख न रहनेपर, थके रहनेपर अथवा किसी प्रकारके मानसिक उद्वेगके समय यदि हम भोजन करते हैं, तो हमें तुरन्त हमारी मानसिक शक्ति और शारीरिक शक्तिमें क्षीणता प्रतीत होती है। जब स्वास्थ्यके समयकी यह हालत है तब रोगके समय, जब कि मस्तिष्क बहुत अधिक थका रहता है, भोजन किये जानेपर, क्या वह शारीरिक और मानसिक शक्तिको और अधिक क्षीण न करेगा? रोगमें भूख रहती भी कहां है? वह रोगोंकी तीव्रताके अनुपातमें कमो-वेश चली ही जाती है।"

"पर हम साधारणतया क्यों खाते हैं?

"खाते हैं इसलिए कि, भूख लगती है और भोजनसे साधारण कार्योंके करनेमें शरीरकी जो छीजन होती है, उसकी इससे पूर्ति होती है और मस्तिष्क, यदि उसे किसी अन्य कार्यमें न लगा दिया जाय, तो वह अपनी सारी शक्ति लगाकर किये हुए भोजनको पचानेकी कोशिश करता है।"

डॉ० डेवी बचपनसे स्वयं रोगी थे। दुबला-पतला बदन और सफेद चेहरा, यह उन्हें कुछ तो माता-पिताकी देन थी, कुछ उनकी भोजनकी आदतके कारण ऐसा हो गया था। वह भर-भर पेट सबेरे, दोपहर, शामको खाते, पर खाना उसके शरीरमें न लगता। बल्कि धीरे-धीरे उनकी पाचन-शक्ति क्षीण हो गयी और उन्हें अग्निमांद्य हो गया, जो उनके विद्यार्थी-जीवनतक चलता रहा। डॉक्टरी पास कर लेनेपर उन्होंने अपने सारे ग्रंथ उलटे-पलटे, पर उन्हें कोई दवा अपने रोगके लिए उपयुक्त प्रतीत न हुई। कई मित्र डॉक्टरों ने कई दवाएं लेनेकी राय दी, पर गिलास भर तीती, कड़वी दवाइयां पीनेकी उनकी हिम्मत न होती थी। वह जिस-तिस तरह चलते रहे, पर अब, जब डॉक्टरीका काम जोरसे करना पड़ा, उनका स्वास्थ्य और भी गिरने लगा। मित्र उनकी अवस्थापर अफसोस करते, पर किसीके पास उन्हें देनेको कोई उपयुक्त राय नहीं थी। एक दिन यकायक उन्हें अपना एक पुराना साथी सड़क पर घूमता मिल गया, जो यूरोपकी यात्रा करके आया था। उसने डा० डेवीके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें

व्यर्थकी सहानुभूति एवं चिंता प्रकट नहीं की, पर उन्हें बताया कि यूरोपवाले अमेरिकनोंसे बहुत हल्का नाश्ता करते हैं, और भी उनके सम्बन्धमें बहुत बातें बतायीं। डॉ० डेवीको लगा कि सचमुच सबेरे नाश्ता करना तो व्यर्थ ही है। पेट रातके भोजनसे भी छुट्टी नहीं पाये रहता और लोग उसे सबेरे-सबेरे भोजनसे भर देते हैं। पर यह उनका विचारमात्र ही था। वह उसपर चल न सके। चले तब, जब उनके लिए सबेरे अपने आफिसकी कुर्सीपर ठीकसे बैठे रहना मुश्किल हो गया। सुस्ती ऐसा घेरती कि वह कुछ काम न कर पाते। तब उन्होंने एक दिन हिम्मत की और सबेरे कुछ भी न खाया। इससे उन्हें पेट खाली-खाली सा तो लगा, पर स्फूर्ति काफी रही और इसी प्रकार दूसरे दिन नाश्ता न करनेपर जो चेतनता उन्हें प्रतीत हुई, वह उनके लिए आश्चर्यजनक थी। उन्होंने नाश्ता बिलकुल छोड़ दिया। कुछ ही दिनों बाद उनके मित्र उन्हें स्वास्थ्य-सुधारपर बधाइयां देने लगे। अब तो उन्होंने पाचन-सम्बन्धी रोगियोंको नाश्ता न करनेकी राय देना शुरू किया। जो भी इसपर चलता, उसे लाभ होता। एक दूसरे रोगीसे यह सूचना दूरतक फैली और पाचन-सम्बन्धी रोगके रोगियोंके अलावा भी कितने दूसरे जीर्ण रोगके रोगियोंने उनके इस नुसखेको आजमाया। उन्हें लाभ हुआ और इस बातका पता जब डाक्टर डेवीको लगा, तो वह प्रत्येक रोगी ही नहीं, स्वस्थ रहनेके सभी इच्छुओंको भी नाश्ता छोड़ने की राय देने लगे।

अमेरिकामें लोग नाश्ता कुछ थोड़ा-सा नहीं करते, बल्कि पूरा भोजन ही करते हैं। ऐसे लोगोंको बिलकुल नाश्ता न करनेकी राय देना घोर विरोधको न्योता देना था। अतः पहले डॉ० डेवी लोगोंको चाय या काफी पीकर रहनेको कहते; पर धीरे-धीरे उनसे वह भी छुड़वा देते।

नाश्ता छोड़नेसे उनके अधिकतर मोटे रोगी कुछ हल्के हो जाते, पर उनकी शक्ति निश्चित रूपसे बढ़ जाती। केवल नाश्ता न करनेसे कई लोगोंकी आंखोंकी रोशनी बढ़ी, सुनाई साफ देने लगा, घ्राणेंद्रिय तीव्र हो गयी। पुराने दमे, नजले, बवासीरके रोगियोंने भी नाश्ता छोड़नेसे

आश्चर्यजनक रूपमें लाभ पानेकी बात बतायी । अब डॉ० डेवीने रोग नहीं, रोगियोंका अध्ययन करना शुरू किया और उन्हें ज्ञात हुआ कि भूखसे अधिक भोजनके कारण रोग होते हैं । इस प्रकार उपवास एवं "नाश्ता छोड़ो" के संबंधमें प्राप्त हुए ज्ञानको लक्ष्य करके उन्होंने लिखा है कि "उपवासका पूरा महत्व मुझे नाश्ता छोड़ने के बाद ही ज्ञात हुआ । इस संबंधकी और बातें भी धीरे-धीरे ही समझमें आयीं । भोजनसे केवल शरीरकी छीजनकी पूर्ति होती है, गयी हुई शक्ति केवल निद्रासे ही मिलती है । मैं कितना कुड़मग्ज हूँ, अन्यथा यह छोटी-सी बात बहुत पहले ही मेरी समझमें आ जानी चाहिए थी ।"

डॉ० डेवीने लोगोंको तीस, चालीस और पचास-पचास दिनके उपवास भी कराये, जिसकी संख्या दस-पांच नहीं, सैकड़ोंमें है । उपवास-संबंधी उनके विचारोंको लेकर अमेरिकामें एक बार बहुत हो-हल्ला मचा था । बड़े-बड़े दैनिक पत्रोंके रिपोर्टर उनके रोगियोंके घरका चक्कर लगाते रहते, रोगियोंके चित्र लिये जाते और उनके सम्बन्धमें लम्बी-लम्बी रिपोर्टें निकलतीं ।

डॉक्टरोंको भी डॉ० डेवीने बहुत फटकारा है । उन्हें ललकार कहा है--"डॉक्टर ! तुम रोगीको रोगमुक्त करने जानेके पहले अपने रोग मिटा लो न ! कितने नासमझ हो तुम ! मालूम होता है कि तुम्हें स्वास्थ्यके नियमोंका तनिक भी ज्ञान नहीं है, अन्यथा सिगरेट पी-पीकर अपनेको हमेशा क्यों बीमार बनाते रहते और उसके धुएंसे रोगीके स्वच्छ कमरेको गंदा एवं जहरीला क्यों बनाते ?

डॉ० डेवीको अपने समयमें कितने ही ऐसे पादरी तथा सरकारी अधिकारी, मिले जिन्होंने उनके विचारोंका प्रचार किया । शिष्य भी मिले, जो आज उनके विचारोंके आधारपर लोगोंकी चिकित्सा करते हैं ।

(३)

समझदारीसे उपवास

प्रोफेसर एरनाल्ड इहरिट अमेरिकाके एक बहुत प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक हुए हैं। वह बड़े खरे स्वभावके थे। उनके लिखनेमें अद्भुत् ओजस्विता थी। अपने विचार प्रकट करते समय वह कभी यह खयाल नहीं करते थे कि अपने प्रतिपक्षियोंको वह कितने कड़े शब्दोंमें याद कर रहे हैं! उनका लक्ष्य होता था अपने विचारोंको स्पष्ट एवं जोरदार शब्दोंमें रखना, जिसका फल यह होता था कि अधिकांश पाठक तो इनकी कृतियां पढ़कर इनके मुरीद हो जाते थे, पर कुछ इन्हें घमंडी भी समझने लगते थे। जो कुछ भी हो, प्रोफेसर इहरिट की उपवास-विज्ञानको अपनी देन है, जिसके लिए वह प्राकृतिक चिकित्सकों एवं प्राकृतिक चिकित्साके प्रेमियों द्वारा हमेशा याद किये जायेंगे।

प्रोफेसर इहरिटके पहले उपवास-चिकित्सक उपवासकी तैयारीपर जोर नहीं देते थे। उनके सामने इसकी आवश्यकता स्पष्ट नहीं थी। यदि उपवासके पहले वे रोगीको कुछ दिनों अपने भोजनमें कुछ अधिक फल-तरकारी रखनेको कहते थे, तो केवल भोजनको हल्का करनेकी गरजसे और यदि रोगी सबल हुआ, तो वे उसे पहले दिनसे ही उपवास कराने लगते थे, जिसका फल यह होता था कि उपवासमें रोगीमें कभी-कभी बड़े कष्टकारक लक्षण उत्पन्न होते रहते, जो कठिनाईसे दूर होते और जिनकी वजहसे उपवास कभी-कभी समयके पहले ही तोड़ना पड़ता। इन कष्टोंसे बचनेका उपाय लोगोंको प्रोफेसर इहरिटकी पुस्तक 'समझदारीसे

उपवास' (रैशनल फास्टिंग) में मिला, जो उनके रोग और स्वास्थ्य-सम्बन्धी इन विचारोंमें निहित है :

"आप किसी रोगको लीजिए। प्रत्येक रोगमें रोगके फलस्वरूप शरीरसे किसी-न-किसी रीतिसे श्लेष्मा निकलने लगता है और जब रोग बढ़ जाता है, मवाद अर्थात् सड़ा हुआ रक्त आने लगता है। यूँ थोड़ा श्लेष्मा प्रत्येक स्वस्थ शरीरमें होता है और यह मल आदिके साथ थोड़ी मात्रामें निकलता भी रहता है, पर मेरे कथनकी सचाई प्रत्येक बुद्धिमान व्यक्तिकी समझमें आ जायेगी, जब वह इसपर गौर करेगा कि नाकमें लगनेवाले साधारण जुकामसे लेकर फेफड़ोंके प्रदाह, क्षय एवं मिरगी (झागके रूपमें मुंहसे निकलनेवाला मल) श्लेष्मा ही है। कान, आंख, त्वचा, पेट एवं हृदयके जिन रोगोंमें अथवा गठिया, पागलपन आदिमें जहाँ श्लेष्माके प्रत्यक्ष दर्शन नही होते, वहाँ भी रोगका प्रधान कारण श्लेष्मा ही होता है। इन रोगोंमें श्लेष्मा शरीरके बाहर निकल न पानेसे वह रक्तमें मिल जाता है और ठंढकके कारण जहाँ रक्त-नलिकाएं सिकुड़ गयी होती हैं, वहाँ पहुँचकर जलन, सूजन एवं दर्द उत्पन्न करता है।"

"ऐसी दशामें रोगीको श्लेष्माविहीन खाद्य अर्थात् कोई फल देना चाहिए अथवा कुछ भी न देकर पानीमें नीबूका रस मिलाकर अथवा केवल पानी पिलाना चाहिए-- ज्यों ही चिकनाई, मांस, रोटी, उबला दूध, आलू एवं अन्य श्वेतसारीय पदार्थ जैसे, चावल आदिके रूपमें श्लेष्माका शरीरमें पहुँचना बंद हो जाता है, शरीर, रक्तमें इकट्ठे श्लेष्मा एवं मवादको शरीरसे बाहर फेंकनेकी ओर प्रवृत्त होता है। यह श्लेष्मा साधारणतः पेशाबके साथ निकलने लगता है और यदि श्लेष्मा अधिक हुआ, तो शरीरसे श्लेष्मा निकालनेवाले जितने अंग हैं, वे सब और सारी श्लैष्मिक झिल्लियाँ श्लेष्मा निकालने लगती हैं।"

इस प्रकार इहरिट साहबकी रायमें रोगोंका कारण श्लेष्माकारक खाद्योंका अधिक प्रयोग ही है और रोगोंको दूर करने लिए श्लेष्मानिवारक भोजनकी जरूरत है। श्लेष्माकारक खाद्य पहचाननेकी उन्होंने एक

तरकीब बतायी है और यह भी बताया है कि श्लेष्माकारक खाद्य रोग कैसे पैदा करते हैं।

"यदि रोटी बनानेके काममें आनेवाले किसी अन्नके आटे, आलू या चावलको बहुत देरतक उबाला जाय, तो उसमेंसे चिकनी लेई-सी एक चीज (श्लेष्मा) निकलने लगती है। इसका उपयोग जिल्दसाज और बढ़ई कागज या लकड़ी जोड़नेके लिए करते हैं। यह चिकनी चीज बहुत जल्द खट्टी हो जाती है, उसमें सड़न उत्पन्न हो जाती है और तब यह कीटाणुओंके वासका काम देती है। पाचन-क्रिया भी किसी भट्ठीसे कम नहीं है। इसका काम है श्वेतसारको पचाकर शर्करा बनाना; क्योंकि रक्त केवल शर्कराका ही उपयोग कर सकता है, अतः इसमें जब ये श्वेतसारीय खाद्य पड़ते हैं, तो उनमेंसे चिकनी चीज (श्लेष्मा) निकलने लगती है, जिसे शरीरको अपनेसे बाहर करना होता है और वर्षों यह काम चलते रहनेके कारण चिकनाहट आमाशय एवं आंतोंमें धीरे-धीरे चिपकती जाती है और इस हदतक चिपक जाता है कि वहाँ सड़न उत्पन्न हो जाती है, रक्त-नलिकाएं रुंध जाती हैं और अंतमें रक्त दूषित हो जाता है।

"पर यदि अंजीर, खजूर, किशमिश, मुनक्का या अंगूरको उबाला जाय, तो ये भी गाढ़े लेई-से हो जाते हैं, किंतु न ये सड़ते हैं और न इनमेंसे श्लेष्मा निकलता है। यह पककर बिलकुल चासनीकी तरह हो जाते हैं, जिसे रक्त तुरंत अपने उपयोगमें लाता है। चासनीका न सड़नेका गुण सर्वविदित है। फलको सड़नेसे बचानेके लिए इसीकी सहायतासे उनका मुरब्बा बनाया जाता है।" पर यहाँ यह बता देना असंगत न होगा कि फल-शर्करा और इक्षु-शर्करा (ईखकी चीनी) के गुण भिन्न हैं। फल-शर्कराका ही उपयोग शरीर तुरंत एवं उसके स्वाभाविक रूपमें कर सकता है। फल-शर्करा सभी फलोंमें थोड़ी-बहुत मात्रामें और किशमिश, मुनक्का, खजूर, अंजीर-सरीखे सूखे फलोंमें विशेष रूपसे मिलती है। गन्नेकी मिठास अथवा गन्नेके रससे बनी चीनी इससे भिन्न है। उसे उपयोगमें लानेके पहले शरीरको उसे भी श्वेतसार की तरह ही पचाना

पड़ता है ।

इस प्रकार श्वेतसारीय खाद्य श्लेष्माकारक हैं--सभी अन्न, कंद जैसे आलू वगैरह, मांस, मछली, अंडे भी इसी कोटिमें आते हैं । केवल हरी तरकारियां और सभी ताजे एवं सूखे फल श्लेष्मा-निवारक खाद्यकी श्रेणीमें आते हैं । रोग श्लेष्माकारक खाद्योंको कम लेना शुरू करने अर्थात् केवल श्लेष्मा-निवारक खाद्योंपर रहने लगनेके समयकी अपेक्षा उपवासमें अधिक तेजीसे निकलता है । उपवासमें पाचन-क्रिया बंद हो जाती है, जिससे जीवन-शक्तिको रोगनिवारणके कार्यका-शरीरसे श्लेष्मा निकालनेका--पूरा मौका मिलता है । अपने इस विश्वासको साबित करनेके लिए इहरिट साहब चौदह महीनेतक केवल फल-तरकारियोंका उपयोग करते रहे तथा बीच-बीचमें उपवास भी करते रहे । उपवास इन चौदह महीनोंमें इन्होंने १२६ दिन किये थे, जिसमें ४९ दिनका एक अटूट उपवास भी था ।

यह भोजन-परिवर्तन उन्होंने अपने रोगोंके निवारणके ख्यालसे भी किया था । रोग उन्हें विशेषतः गुर्दोंकी सूजनका था, जो सांघातिक समझा जा रहा था । अपने इस प्रयोगसे वह बिलकुल स्वस्थ हो गये और इतने स्वस्थ हुए कि वह सवा दो घंटे बिना ठहरे दौड़कर लोगोंको दिखा सके और आगे चलकर उन्होंने अपना स्वास्थ्य इतना उन्नत बनाया कि ५६ घंटे लगातार चलकर उन्होंने अपने पुराने डाक्टरों एवं मित्रोंको चकित कर दिया ।

फलाहार, अन्नाहार, दूध एवं मांसका शरीरकी रोग-निवारक शक्तिपर क्या प्रभाव होता है, यह दिखानेके लिए उन्होंने एक बार अपने हाथके निचले हिस्सेमें चाकूसे एक घाव कर लिया । घावसे रक्त जरा भी नहीं बहने पाया । घावके मुंहपर आया हुआ रक्त तुरंत जम गया । न उन्हें कोई दर्द हुआ, न घावमें सूजन पैदा हुई, न श्लेष्मा निकला, न मवाद । घाव तीन दिनमें सूख गया और उसपर लगी पपड़ी उतर आयी । फिर वह शाकाहार करने लगे अर्थात् उन्होंने फलके साथ तरकारियां और अन्न (श्वेतसारीय श्लेष्मा पैदा करनेवाला खाद्य) जोड़े । दूध उन्होंने नहीं

लिया। कुछ दिनों बाद वैसा ही घाव उन्होंने हाथपर फिर किया। इस घावसे थोड़ी देर रक्त निकलता रहा, थोड़ा दर्द हुआ और थोड़ा मवाद भी निकला, थोड़ी सूजन भी हुई और इसके सूखनेमें दूना वक्त लगा। फिर इसी प्रकारका घाव उन्होंने अपने भोजनमें मांस, रोटी और थोड़ी शराब जोड़कर किया तो घावसे रक्त देरतक निकलता रहा, जो पतला एवं हल्के लाल रंगका था, सूजन अधिक हुई तथा मवाद कई दिनोंतक निकलता रहा और यह घाव दो दिनोंका उपवास करनेके बाद ही पूरी तरह सूख सका।

इहरिटकी रायमें फल ही मनुष्यका आदर्श भोजन है। वे कहते हैं--"मनुष्य किसी समय केवल फल ही खाता था, इसमें संदेह करनेकी जरा भी गुंजाइश नहीं है और देह-धर्मशास्त्रके अनुसार यह साबित किया जा सकता है कि आज भी उसका शरीर फलोंद्वारा पोषण प्राप्त करनेमें समर्थ है। क्या मनुष्य अपनी नैसर्गिक बुद्धिद्वारा पोषण प्राप्त करनेमें समर्थ है ? क्या मनुष्य अपनी नैसर्गिक बुद्धिद्वारा बिना किसी सबूतके, आसानीसे यह नहीं समझ सकता कि शिकारी बननेसे पहले वह पूर्णतया फलाहारी था ? मेरा तो यह भी विश्वास है कि फलाहार उसे पूर्णतया स्वस्थ, सुंदर एवं सशक्त रखता था--रोग, शोक, कष्टसे मुक्त। मनुष्यके पोषणके लिए आवश्यक, कौन-सी ऐसी चीज है जो फल और मेवोंमें नहीं मिलती ?

"प्रकाश और सूर्यकी पहुँचसे दूर अंधेरे कमरोंमें जीवन व्यतीत करनेवाले आजके सुसभ्य प्राणीके शरीरका सफेद रंग, सुंदरताकी व्याख्याकी कोटिमें कभी नहीं आ सकता। वह शवका रंग है, जो उबले, मृत एवं गलत भोजनकी देन है। रक्ताभ अंगूर एवं नारंगी, संतरेका भोजन एवं धूप, वायुस्नानका विधिवत् सेवन मिलकर शरीरको कितना सुंदर रंग प्रदान कर सकते हैं एवं उसे कितना ओजस्वी बना सकते हैं, यह आजके चित्रकारकी कल्पनाके भी बाहरकी चीज है।"

"यदि किसीको बचपनसे ही श्वेतसार-विहीन खाद्योंपर पाला जाय और उसे केवल फल खिलाये जायं, तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि, न तो वह कभी बीमार पड़ेगा, न कभी बूढ़ा होगा।

"मनुष्यके हाथकी करामातके प्रतीक खाद्य ही रोगोंके प्रधान कारण हैं। यही बुढ़ापा और मोटापा लाते हैं। इन्हींके कारण बाल झड़ते और मुंहपर झुर्रियां पड़ती हैं, नाड़ी-दौर्बल्य आता है और स्मरण-शक्तिका ह्रास होता है।" प्रोफेसर साहबकी राय है कि यदि मनुष्य अपने स्वाभाविक भोजनपर आ जाय, तो वह किसी भी रोगसे अपनेको मुक्त कर सकता है। उपवास रोगसे छुट्टी दिलाने का केवल एक तेज रास्ता है, पर उपवासपर धीरे-धीरे ही आना चाहिए। जो रोगी हों, वे कभी लंबा उपवास करनेकी जल्दी न करें।

"यदि मनुष्य स्वस्थ भी हों, तब भी उसे आरंभमें लंबा उपवास नहीं करना चाहिए। पहले उसे छोटे उपवाससे आरंभ करना चाहिए। सप्ताहमें एक या दो बार छत्तीस घंटेके लिए किये गये उपवास भी रोगको दूर करनेमें समर्थ हैं। जिन्होंने कभी उपवास नहीं किया है, उनके लिए पहली बार इतना काफी है कि वे संध्याको भोजन न करें तथा सोनेके पहले एनिमा लेकर पेट साफ कर लें।"

"छत्तीस घंटेके उपवासमें दूसरे दिनतक कुछ भी नहीं खाना चाहिए और उपवास केवल थोड़े फलोंसे तोड़ना चाहिए। प्रत्येक उपवासके बाद पहला भोजन फलका होना आवश्यक है। फलका रस उपवासमें ढीली हुई श्लेष्माको शरीरके बाहर करता है।"

"छोटे-छोटे उपवासोंकी सहायतासे रोग शीघ्रतासे भगानेकी सर्वोत्तम रीति यह है :-- पहले तीन दिनका उपवास किया जाय, फिर उपवाससे होते हुए लाभको बढ़ाते रहनेवाला कार्यक्रम चलाया जाय अर्थात् तीन दिनतक पानीमें केवल नींबू मिलाकर पीते रहा जाय। ध्यान रहे, पानीमें चीनी हर्गिज न डाली जाय। चौथे दिनसे कोई फल लेने लग जायं। इस चौथे दिनकी संध्याको एनिमाद्वारा आंतोंकी पूरी सफाई की जाय और नित्य फलोंकी मात्रा बढ़ाते रहें कि सातवें दिन फल आवश्यक प्रकार एवं

आवश्यक परिमाणमें लेने लग जायं।

"जो अपेक्षाकृत स्वस्थ हैं एवं जिन्हे उपवासके समय, जब जोरोंसे श्लेष्मा निकले लगे, तब आराम करनेकी सुविधा हो, वे एक बारमें कई सप्ताहका लंबा उपवास कर सकते हैं। लंबे उपवासमें वजन बहुत घट जाता है एवं चेहरा दुबला हो जाता है। पर इससे घबराना नहीं चाहिए। उपवासके बाद शीघ्र ही मुंहपर स्वास्थ्यके चिह्न आ जाते हैं एवं गाल लाल हो जाते हैं। बात यह कि उपवासके बाद जो कुछ भी खाया जाता है, वह शरीरमें भले प्रकार लगता है।"

उपवासद्वारा रोग क्यों दूर होता है एवं उपवासकी प्रतिक्रिया शरीरपर क्या होती है, यह प्रोफेसर इहरिटने बड़े अच्छे तरीकेसे बताया है:--

"शरीर रबरकी-सी लचीली नलियोंसे बना है। नलियां अधिक खाते रहनेके कारण फैल जाती हैं। रक्तके अधिक एवं अस्वाभाविक दबावके कारण शरीरके स्वाभाविक कार्योंमें व्याघात पड़ने लगता है। उपवासमें ज्यों ही भोजन करना बंद किया जाता है, नलियां सिकुड़कर अपनी प्राकृतिक दशामें आने लगती हैं-- रक्तसे व्यर्थका पानी निकलता जाता है एवं वह गाढ़ा हो जाता है। यह कार्य उपवासके समयके आरंभिक दिनोंमें कई दिनोंतक होता रहता है। फलतः इस समय आपका शरीर आपको हल्का मालूम होने लगता है एवं आपकी खुशी कई बार खानेके समयसे भी अधिक बढ़ जाती है। पर शीघ्र ही नलिकाओंकी दीवारोंमेंसे पुराना श्लेष्मा निकलकर रक्तमें मिल जाता है एवं रक्त अधिक गाढ़ा हो जाता है। गाढ़ा रक्त जब संकुचित हुई नलिकाओंमेंसे गुजरने लगता है, तब बेचैनीका अनुभव होता है। पर शीघ्र यह गंदगी पेशाबके रास्तेसे निकल जाती है और आपका तात्कालिक कष्ट दूर हो जाता है। यही नहीं, गंदगी निकल जानेसे शक्ति खाने-पीनेके समयसे भी अधिक प्रतीत होने लगती है। इसलिए यह सिद्ध हो गया है कि उपवासमें मनुष्य, उपवासके पांचवे-छठे दिनसे

उपवासके बीसवें दिन अधिक शक्तिशाली हो जाता है । मेरा एक रोगी, जिसने उपवास प्रारंभ करनेके बहुत पहले मांस खाना छोड़ दिया था, उपवासके चौबीसवें दिन पहाड़ोंमें पैतालीस मील चला और मेरा एक मित्र, जो मुझसे पंद्रह वर्ष उम्रमें छोटा है, उपवासके दसवें दिन छप्पन घंटेतक लगातार चलता रहा । अनेक और ऐसे उदाहरण हैं, पर यहाँ उनकी चर्चामें समय गंवानेकी जरूरत नहीं है । निश्चय ही यह इस बातका सबूत है कि, शक्ति भोजनपर नहीं, शुद्ध रक्तके ठीक संचालनपर निर्भर है।"

"उपवासमें जब केवल जल ग्रहण किया जाता है, तब शरीरसे उसी प्रकार गंदगी निकलती है, जिस प्रकार एक गंदे पानीसे भरे स्पंजको दबानेसे गंदगी निकलती है । यह गंदगी और कुछ नहीं, केवल श्लेष्मा और कभी-कभी मवाद और पहले ली गयी दवाएं होती हैं, जिन्हें शरीर अपने रक्तमें मिलाकर इस हदतक घुलाता है कि वे गुर्दों-रूपी चलनीसे छन कर आसानीसे बाहर निकल सकें ।"

अंतमें इहरिट साहबने उपवास-कालके संबंधोंमें कुछ नियम बताये हैं, जिनमें उनके उपवाससंबंधी विचार सूत्र रूपमें आ गये हैं :--

१--उपवासमें नित्य या कम-से-कम हर दूसरे दिन, एनिमा लेकर पेट साफ करना चाहिए ।

२--लंबा उपवास शुरू करनेके पहले दो-चार बार कोई रेचक ओषधि लेकर पेट साफ कर लेना चाहिए और जिस दिन उपवास आरंभ किया जाय, उस दिन तो यह ओषधि ले ही लेनी चाहिए ।

३. यदि संभव हो, तो उपवासमें रात-दिन शुद्ध वायुमें रहना चाहिए।

४. उपवासमें टहलना अथवा कोई कसरत तभी करनी चाहिए, जब उसके लिए शरीरमें यथेष्ट शक्ति प्रतीत हो । जब थकान अथवा कमजोरी लगे, उस समय जहांतक बन सके, आराम करना एवं सोना चाहिए।

५--उपवास-कालमें जब विष उखड़कर रक्तमें मिल जाता है और

यह कई बार होता है, तब उपवासीको कमजोरी मालूम होती है, नींद ठीक तरह नहीं आती, बुरे-बुरे सपने आते हैं। उस समय उपवासके लाभके प्रति संदेह होने लगता है, उसपरसे श्रद्धा उठती हुई प्रतीत होती है। उस समयके लिए यह याद रखिए कि आप प्रकृतिकी शस्त्र-क्रियाकी मेज-आपरेशन टेबुलपर लेटे हुए हैं और प्रकृतिं बिना चाकू एवं किसी औजारके आपके शरीरसे रोगोंको निकालनेके लिए यह आश्चर्यजनक आपरेशन कर रही है, जिसे करनेमें कोई अन्य समर्थ नहीं है। इस समय एक एनिमा ले लेनेसे सारी परेशानी दूर हो जायेगी। बहुत कष्ट हो तो उपवास तोड़ा भी जा सकता है, पर फलसे नहीं, उस समय तरकारीका रस लेना चाहिए।

६--जब आप उपवासमें लेटनेके बाद उठकर बैठें, तो बहुत धीरे-धीरे बैंठें अन्यथा आपको चक्कर आने लग सकता है। चक्कर आना कोई खतरनाक नहीं है, पर न आना ही अच्छा है। कितने ही लोगोंने इस चक्करसे घबराकर उपवास समयके पहले ही तोड़ दिया और सदाके लिए उपवाससे मुंह मोड़ लिया।

७--उपवास-कालमें केवल सादा पानी पीना ठीक नहीं है। पानीमें थोड़ा नीबू एवं अच्छा शहद या जरा-सा गुड़ मिलाकर पीना मैं अच्छा समझता हूँ। इससे श्लेष्माके छूटनेमें सहायता मिलती है एवं वह पतला हो जाता है, जिससे वह आसानीसे निकल पाता है। पर यदि पानीमें थोड़ा-सा किसी फलका रस मिलाकर पीया जाय, तो वह सर्वोत्तम है। पानी, जितनी बार इच्छा हो, पीना चाहिए, पर ढाई-तीन सेर पानीसे अधिक पीनेकी जरूरत नहीं है। यदि उपवास लंबा हो, तो किसी तरकारीका रस या टमाटरका रस भी पानीमें मिलाकर लिया जा सकता है।

८--किसीको भी बहुत लंबा उपवास करनेकी जरूरत नहीं है। रोगीको तीस-चालीस दिनका उपवास कराना किसी भी अपराधसे कम नहीं है। उस समय उसके शरीरका श्लेष्मा पुरानी दवाएं एवं विष उसके उस रक्तमें मिल जाते हैं, जो रोगके विषसे स्वयं अधिक दूषित रहते हैं और

रोगीको लाभके बजाय हानि होती है । उसकी जीवन-शक्ति कमजोर हो जाती है । रोगीको पहले छोटे उपवास ही कराने चाहिए । और बीच-बीचमें उसे फल-तरकारियोंपर रखकर उसका रक्त बढ़िया बनाते रहना चाहिए । रोग निकालनेकी यह सर्वोत्तम विधि है । लबा उपवास करना हो, तो वह अंतमें ही, और ऊपर बतायी विधिसे रक्तके बहुत सजीव एवं साफ हो जानेके बाद ही कराना चाहिए ।

९--उपवास जितना लंबा होगा, उतना ही लाभदायक होगा, उपवास-संबंधी इस धारणाको त्याग देना चाहिए, और यह भी गलत है कि जबतक जीभ साफ न हो जाय, उपवास करते जाना चाहिए ।

इसी तरह प्रोफेसर साहबने उपवास तोड़नेके संबंधकी बातें भी सूत्ररूपमें कही हैं ।

१--उपवास तोड़नके बाद पहला भोजन एवं कई दिनोंतक, अधिकतर सारक भोजन ग्रहण करना चाहिए । इसके लिए श्वेतसार-विहीन कच्ची या पकी तरकारी सर्वोत्तम है । पालक विशेष रूपसे उपयोगी है; इस समय पुष्टिकारक भोजनके फेरमें पड़ना ठीक नहीं है। उपवास तोड़नेके पहले यदि कोई रेचक ओषधि ले ली जाय, तो ठीक है।

२--जब यह पहला भोजन शरीरमें गुजरता है, तो वह आमाशय एवं आंतोंसे श्लेष्मा एवं विषको निकालता जाता है ।

३--यदि उपवासके तोड़नेके दो-तीन घंटे बाद शौच न हो, तो एनिमाद्वारा पेट जरूर साफ करना चाहिए । मुझे उपवास तोड़नेके एक घंटे बाद शौच होता है और तबियत तुरंत साफ और हल्की हो जाती है ।

४--जितना लंबा उपवास होता है, उतनी ही अच्छी तरह इसके बाद पेट साफ होने लगता है ।

५--जिन्होंने कभी मांसाहार न किया हो, अथवा जिन्होंने उपवासके

पहले कई दिनोंतक अपने भोजनमें फलोंको यथेष्ट स्थान दिया हो, वे अंगूर, भिगोये हुए अंजीर, खुबानी, आलू-बुखारासे भी उपवास तोड़ सकते हैं।

६--उपवासके बाद दो-तीन दिनतक बहुत कम खाना चाहिए। कम खानेसे भी शौच होता है। यदि न हो, तो पत्तीदार शाकोंका उपयोग करना चाहिए। ये शाक उपवासके समय इकट्ठे श्लेष्माको आंतोंसे निकालनेमें विशेष रूपसे समर्थ हैं।

अंतमें यह बता देना जरूरी है कि इहरिट साहब रोगोंका जितना बड़ा कारण श्लेष्माकारक खाद्योंको समझते हैं--पेटूपनको भी वे उससे किसी तरह कम नहीं समझते। वह कहते हैं कि आवश्यकतासे अधिक एक तोला भी भोजन रोगोंकी सृष्टि करता है एवं अधिक खाकर कोई भी अपने उपवाससे प्राप्त लाभको धीरे-धीरे बिगाड़ सकता है।

(४)

उपवास दर्शन

श्री एडवर्ड अर्ल प्युरिंगटनने उपवासके संबंधमें एक बहुत ही सुंदर पुस्तक लिखी है। नाम है 'फिलासफी आफ फास्टिंग' अर्थात् 'उपवास दर्शन'। यह पीड़ितों एवं पापियोंके नाम एक संदेश है। वस्तुतः यह पुस्तक शारीरिक स्वास्थ्य सुधारनेके इच्छुकके लिए लिखी ही नहीं गयी है। उनके लिए तो प्युरिंगटन साहबने दूसरी आधा दर्जन पुस्तकोंके नाम गिनाये हैं, जिनमें जुस्ट लिखित 'रिटर्न टू नेचर' अर्थात् 'प्राकृतिक जीवनकी ओर'[1] और, इहरिट-लिखित 'दी रेशनल फास्टिंग' अर्थात् 'समझदारीसे उपवास' मुख्य हैं। यह पुस्तक तो उनके लिए लिखी गयी है, जो स्वस्थ हैं अथवा अपना रोग बहुत-कुछ मिटा चुके हैं और आगे बढ़ना चाहते हैं--जिनके लिए आनंद भौतिक वस्तुओंतक ही सीमित नहीं है। प्युरिंगटन साहबने पुस्तक इसलिए भी नहीं लिखी कि उन्हें पुस्तक लिखनी थी। इस प्रकार लिखना तो वह अपना अपमान एवं अपने मित्रोंको धोखा देना समझते हैं। शब्द तो केवल कंकड़-पत्थरकी तरह हैं; उनमें जीवन तो तभी आता है कि जब उन्हें अनुभूतिके मिट्टी-गारेसे जोड़ा जाता है एवं किसी उद्देश्यकी नींवपर रखा जाता है। इस प्रकार जीवनसे निकला हुआ साहित्य ही जीता है। उनका कहना है कि "यदि मैंने अपने विचारोंके अनुसार जीवन न रखा होता, तो मेरे अनुभवोंको शब्दबद्ध करनेका कौड़ी

---

१. यह पुस्तक आरोग्य मंदिर, गोरखपुरद्वारा प्रकाशित हुई है।

मोल भी न होता।"

यह पुस्तक प्रकाशित भी बड़ी कठिनाईसे हो पायी थी। नये एवं अनोखे विचारों से भरी इस पुस्तकको प्रकाशित करनेकी कोई हिम्मत ही नहीं करता था। अंतमें डॉ० बेनिडिक्ट लुस्टने इसे प्रकाशित किया। वह एक ईमानदार प्राकृतिक चिकित्सक थे और उन्होंने प्युरिंगटन साहबकी पुस्तक केवल इसीलिए छापी कि, उस पुस्तकमें उन्हें एक सच्चे हृदयसे निकले हुए उद्‌गारके दर्शन हुए।

उपवासके अन्य खोजियोंकी भांति ही प्युरिंगटन साहब भी बचपनमें बीमार रहते थे। बहुत दुबले-पतले, बीमार-से तो वह पैदा ही हुए थे। फिर बचपन और जवानी भी बीमारीमें बीती। कोई पंद्रह तरहकी बीमारियां उन्हें एक-दूसरेके बाद सताती रहीं, जिनके लिए कभी-कभी उन्हें छह-छह प्रकारकी दवाइयां एक साथ लेनी पड़तीं। उनका वजन हिसाबसे जहाँ १५० पौंड रहना चाहिए था, वहाँ रहता था ११० पौंड। दिनभर उन्हें ठंढ लगा करती थी, जिसकी वजहसे सारा समय उन्हें आगके पास बैठकर बिताना पड़ता था। उन्हें खुद या उनके मित्रोंको कोई उम्मीद नहीं थी कि अपने जीवनमें वह किसी कामके होंगे अथवा कुछ कर सकेंगे।

उनके रोग अधिकतर पाचन-संबंधी एवं नाड़ी-संबंधी थे। टीलेपर, पेड़पर चढ़ना उनके लिए दूभर था। ऊंचाईपर चढ़ते ही उन्हें अंधेरी-सी आने लगती थी, सिर चकराने लगता। जरा भी क्रोध आनेपर या थोड़ी-सी भी दौड़-धूप करनेपर सिरमें दर्द हो जाता, जो कई दिन चलता। भीड़-भाड़ देखकर उन्हें घबराहट होती थी। समाजमें अधिक लोगोंसे मिल सकना उनके लिए कठिन था। बारह वर्षकी उम्रमें वह आठ वर्षके बच्चेसे लगते और बातचीतसे प्रतीत होता, जैसे बूढ़े हो गये हैं। उन्हें बहुत तेज दिमाग अपने पितासे मिला था और मातासे बड़ी अनुभूतिशील आत्मा। माता और पिता, दोनों ही शारीरिक ऐश्वर्यसे वंचित थे, फिर वह इनकी पैतृक संपत्ति कैसे हो पाती--वह तो उन्हें स्वयं अर्जन करनी थी।

दवा छोड़कर स्वास्थ्य सुधारनेके लिए उन्होंने भोजन, जल, वायु,

प्राणायाम, कसरत, मालिश, धूप, मिट्टी एवं प्राकृतिक चिकित्साके अन्य साधनोंका सहारा लिया। इन सबसे मदद मिली। "शारीरिक रोग तो शीघ्रतासे चले गये, पर मन और आत्माको शांति न मिली।" इन्होंने कई तरहकी मानसिक चिकित्सा भी करायी, पर लाभ न हुआ। वह कहते हैं, ये विधियां तो मनुष्यकी बनायी हुई हैं, ये ऐहिक सुखके इच्छुकोंके लिए लाभदायक हो सकती हैं, पर मुझे तो ईश्वरकी प्राप्ति करनी थी।

"इसके लिए मैंने तीस दिनका उपवास किया और उस उपवासके द्वारा मुझे ईश्वर मिला, क्योंकि हममें और ईश्वरमें कोई अंतर नहीं। इसलिए दूसरे शब्दोंमें मुझे यह कहना चाहिए कि, मैंने अपने-आपको पा लिया। उपवासके दिनोंमें मैंने कुछ खाया नहीं, केवल जल पीकर रहा और कभी-कभी पानीमें किसी खट्टे फलका थोड़ा-सा रस मिला लिया करता था। इस उपवासके द्वारा मैं अपना कल्प करना चाहता था, अपने हृदयके कलुषको धो बहाना चाहता था एवं अपनी आत्माको बाहरी प्रभावसे मुक्त करके प्रकाशकी खोजमें था और मुझे यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं है कि उपवासकी सहायतासे मेरा यह लक्ष्य सिद्ध हुआ। ज्ञानेन्द्रियां मेरी इतनी सतेज हो गयीं, जितनी बच्चेकी होती हैं। मनपर मेरा ऐसा अधिकार पहले कभी नहीं हुआ था और इस अधिकारको तोड़नेमें कोई शक्ति समर्थ नहीं है। शरीर तो मेरा दस वर्षोंमें कभी इतना स्वस्थ नहीं रहा। आध्यात्मिक उन्नतिके संबंधमें कहूँ तो मेरे सामने स्वर्गका द्वार खुल गया, भौतिक सुखोंके सत्यासत्यकी प्रतीति हुई, प्रकाश मिला।"

"मुझे मिले लाभ कोई भी प्राप्त कर सकता है और उससे भी अधिक उन्नति कर सकता है। केवल उसे अपनी इस उद्देश्य-सिद्धिके लिए थोड़ी शक्ति खर्च करनी चाहिए और वह शक्ति, जब मनुष्य सिद्धिसे प्राप्त होनेवाले आनंदकी कल्पना कर पाता है, तो उसमें स्वयं पैदा होती है।

"उपवासमें क्या-क्या करना चाहिए ? आराम, वायु-स्नान, जल-स्नान, कसरत। लेनी चाहिए गहरी सांस और रखनी चाहिए

आशा। यदि इनसे ठीक सहायता ली जाय, तो कोई भी ऐसा तीव्र रोग नहीं है, जो उपवाससे न जा सके और प्रायः सभी जीर्ण रोग इससे अच्छे होंगे। रोग चाहे शरीर-संबंधी हों या मन-संबंधी, उपवासद्वारा लाभ सभीमें होता है।

प्युरिंगटन साहब कहते हैं कि यदि आप स्वास्थ्य, जीवनका आनंद, स्वतंत्रता या शक्ति चाहते हैं, तो उपवास कीजिए। आपको सौंदर्य, विश्वास, हिम्मत, गौरव-सरीखी निधियां प्राप्त करनेके लिए भी उपवास करना चाहिए। उपवाससे मनुष्यकी नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति होती है, उसकी नैसर्गिक बुद्धि जागती है एवं वह प्रेमकी विशालताका अनुभव कर पाता है।

इनमेंसे प्रत्येक विषयपर प्युरिंगटन साहबने छोटे-छोटे परिच्छेद लिखे हैं, जिनमें उन्होंने प्रत्येकका अपना अर्थ समझाया है और बताया है कि वे उपवाससे कैसे प्राप्त होते हैं। जो दृष्टिकोण इन विशेषताओंके प्रति प्युरिंगटन साहबने रखा है, वह उनकी दार्शनिक दृष्टिके अनुकूल है और किसी भी दृष्टिसे क्यों न देखा जाय, उपवासद्वारा ये सभी चीजें सहज साध्य हैं। उपवाससे स्वास्थ्य मिलता है और सौंदर्य तथा आनंद स्वास्थ्यमें निहित हैं। रोगीका चेहरा भला कभी सुंदर प्रतीत हो सकता है? आनंद उसे नसीब कहाँ?

इसी प्रकार हिम्मत, विश्वास एवं आत्म-गौरव भी उपवासके साथ लगे हुए हैं। नैतिकता और आध्यात्मिकता भी उपवासकी परिधिकी चीजें हैं। इसका प्रमाण यह है कि ईसा, बुद्ध, सभीने जो उपवास किये, इस प्रकारकी पूर्णताके लिए किये। उपवासद्वारा दबी हुई नैसर्गिक वृत्ति जागती है। उसपर पड़ी हुई गर्द दूर होती है। प्रकृतिका साहचर्य इस काममें उपवासकी मदद करता है। इन सब सिद्धियोंको प्राप्त करानेवाले उपवासका नाम प्युरिंगटन साहबने रखा है 'विजय-उपवास'। ऐसे उपवासकी निर्विघ्न समाप्तिके लिए उपवास करनेवालेके निमित्त प्युरिंगटन साहबने बीस नियम बताये हैं। इन नियमोंके बारेमें उन्होंने जो

कहा है, उससे उनके लेखनकी चुटीली शैलीका पता चलता है।

प्युरिंगटन साहबने जो पहला नियम बताया है, वह यह है कि उपवास न करो। यदि केवल उपवासकी पुस्तकें पढ़कर यकायक उपवास करनेका इरादा किया है, तो उपवास न करना ही अच्छा है। पहले उपवासके संबंधमें अपने विचार स्थिर करने चाहिए, उसके बाद ही उपवास करना चाहिए। कोरे जोशसे काम नहीं चलेगा।

उपवासकी गाड़ी हमें तीन बड़े लक्ष्य प्राप्त कराती है--रोग निवारण, आत्म-विश्वास और प्रकाश-प्राप्ति। पहला स्टेशन तो आप कसरत, जल, मालिश आदिकी गाड़ियोंद्वारा भी तय कर सकते हैं। पर ये गाड़ियां आपको पहले स्टेशनपर ही छोड़ देंगी, आगे इनकी गति नहीं है। दूसरे स्टेशनकी झांकी शायद आप इन गाड़ियोंसे पा जायं, पर तीसरे स्टेशनके होनेकी तो बात ही उन्हें ज्ञात नहीं है। वहाँ आप उपवासकी मोटरकार द्वारा ही पहुँच सकते हैं। और, सो भी उस कुशल चालककी तरह अपनेआप चलाकर, जो चालीस सेंकडमें मीलभर तय करता है--जिसके लिए अपनेको अच्छी तरह जानना जरूरी है। दूसरेसे इस तेजीसे मोटर चलवाकर कोई भी गंतव्य स्थानपर नहीं पहुंच सकता। इसके लिए अपनी गाड़ी स्वयं अपने हाथोंमें लेनी होती है।

१-उपवासको सभी रोगोंकी अचूक दवा मत समझो। अगर दुनियामें रोगोंकी कोई अचूक दवा है, तो वह है ठीक समझ। जिनके पास समझ है, वे अपनेको चिकित्सक नहीं कहते और न उसे पैंसोंपर बेचते ही हैं। इसी समझका तुम सहारा लो।

उपवासमें कोरी बुद्धिसे ही काम नहीं चलता। उपवास करनेके लिए मनुष्यमें कुछ शरीर भी चाहिए और उपवाससे प्राप्त लाभको रखनेके लिए कुछ बल भी। उपवास आरंभ करनेके पहले उपवासपर अपनी आस्थाको भी पूरी तरह तौल लेना जरूरी है और उपवास करनेके बाद भूल जाना चाहिए कि उपवास कितना बड़ा होगा। उपवास आरंभ होनेपर आते हुए लाभका प्रकाश रास्ता दिखाता है, उपवास बढ़ता चलता है।

उपवास स्वास्थ्य लाभ करनेकी ऋणात्मक क्रिया है। इसकी सहायिका है सफाई। शरीरकी सफाईके द्वारा रोमकूप, वृक्कों एवं फेफड़ोंको अपने काममें अच्छी तरह लगाकर ही हम उपवासमें घनात्मक लाभको प्राप्त कर सकते हैं।

२--उपवास कब करें ? इसका निश्चय स्वयं अंदरसे पैदा होना चाहिए, किसीका हुक्म काम नहीं दे सकता, न किसी दूसरेके अनुभवका ही ठीक अनुसरण किया जा सकता है। वह केवल आपको थोड़ा रास्ता दिखा सकता है। जबरदस्तीका उपवास जबरदस्ती खानेसे भी बुरा है। जिस प्रकार भोजनकी इच्छा हुआ करती है, उसी प्रकार उपवासकी भी तीव्र इच्छा होनेपर ही उपवास करना चाहिए। उपवास करते समय आप प्रकृति माताकी गोदमें रहते हैं। उस समय आपकी आंख परम पिता परमेश्वरकी ओर होनी चाहिए, तभी उपवास सकुशल समाप्त हो सकेगा।

समुद्रमें नाव उतारनेके पहले जिस प्रकार तैरने और खेनेका पूर्व अभ्यास आवश्यक है, उसी प्रकार बड़े उपवासके पहले छोटे उपवासोंका अनुभव आवश्यक है। इस कार्यमें ऐसा आदमी, जिसने उपवास नहीं किया है, आपकी कोई मदद नहीं कर सकता। आपको स्वयं अपनी आत्मासे पथ-प्रदर्शन प्राप्त करना चाहिए। खयाल रहे, उपवास समुद्रकी तरह पार करने और डुबोनेका, दोनों ही काम कर सकता है।

३--उपवास करनेके पहले उपवासपर जितना पढ़ना चाहो, पढ़ लो और फिर उसे भूल जाओ। उपवासियोंके अनुभव तुम्हारे उपवासके मीनारकी नींवके पत्थरका काम दे सकते हैं, पर यह याद रहे कि शुद्ध वायु, जहाँ ये पत्थर रखे जायेंगे, वहाँ नहीं, वह तो मीनारके ऊपर ही मिलेगी और जब मीनारपर चढ़कर तुम शुद्ध वायुके साथ-साथ उगते सूर्यके प्रकाशका आनंद ले रहे हो, तब उपवासियोंके अनुभवके बारेमें मत सोचो। उनकी पुस्तकें पढ़ो और जला दो और देखो कि मौजसे निकलता धुआं अनंतमें लुप्त होता जा रहा है। सच पूछो, तो उपवासपर लिखनेवाले लेखक उपवासके बारेमें कुछ नहीं जानते, मैं भी कुछ नहीं जानता। सभी

अपने लाभके लिए प्रयोगमात्र करते हैं।

दूसरेका अनुभव हमें केवल कार्यारंभकी शक्ति देता है। उन्होंने किया, तो हम भी कर सकते हैं। उन्हें लाभ हुआ, हमें भी होगा। वे अपनी आकांक्षा, विश्वास एवं आत्माकी आवाजके अनुसार चलें, हम भी चलेंगे।

४--उपवास आरंभ करनेके पहले उपवासका उद्देश्य निश्चित कीजिए, आप किसे शक्तिशाली एवं स्वच्छ बनाना चाहते हैं? शरीरको, मस्तिष्कको, विवेकको या आत्माको? इसी प्रश्नके उत्तरपर यह निर्भर करता है कि उपवास कितने दिनोंका? कब? और किस प्रकार? यदि आप अपनी इच्छा-शक्ति दृढ़ बनाना चाहते हैं, तो दस-बीस या तीस दिन उपवास करनेका निश्चय कीजिए और फिर सरपर आसमान भी टूट पड़े, तो निश्चित समयतक उपवास जरूर कीजिए। यदि आप आत्म-प्रकाशके लिए उपवास करना चाहते हैं, तो एक-एक दिनका करते जाइए--ईश्वरकी दया कब होगी, यह कौन कह सकता है? यदि केवल रोग-निवारणके लिए उपवास कर रहे हैं, तो एक लंबे उपवासके बजाय कई छोटे-छोटे उपवास करना अच्छा है। कभी-कभी तो उपवासकी अपेक्षा विशेष प्रकारके भोजनसे रोग जल्द जाते हैं। कामकाजी आदमीके लिए समयके हिसाबसे बड़ेकी अपेक्षा छोटे उपवास करना सरल भी है।

५--लंबा उपवास गरमीके दिनोंमें करना अधिक सुविधाजनक है। उपवासके आरंभ एवं अंतमें फल और तरकारियोंका विशेष उपयोग करना चाहिए। गरमीके दिनोंमें इनकी सुविधा रहती है। गरमीमें पसीना भी आसानीसे और अपने-आप आता है, जिससे सफाई होती रहती है। गरमी आलस्यका समय होनेके कारण वक्त भी आसानीसे कट जाता है। उस समय कुछ करने-धरनेकी इच्छा नहीं होती और उपवासमें शक्ति नष्ट न करनेके लिए आरामसे लेटे रहना और मौजमें रहना जरूरी है।

६--बड़ा उपवास करनेके पहले कुछ छोटे-छोटे उपवास करके उपवासका अनुभव ले लें। इससे लंबा उपवास करनेका साहस बढ़ता है। पहले दो-तीन दिनका उपवास करनेके बाद फिर एक सप्ताहका और तब

फिर एक लंबा उपवास आरामसे किया जा सकता है, पर यह विधान उन लोगोंके लिए है, जो कमजोर हैं, मजबूत दिलवालोंको यह सिखावन बुरी लगेगी और लगनी चाहिए। हर आदमीको यह देख लेना चाहिए कि, उसमें ताकत कितनी है।

७--उपवासमें यदि आपको पड़े रहना, चुपचाप आराम करना नहीं सुहाता, तो काम कीजिए। काम वही हो, जिसे करनेकी तबियत चाहे, जिसके लिए भीतरसे इच्छा उत्पन्न हो। इस मामलेमें किसी दूसरेकी सुननेकी जरूरत नहीं। तबियत-चाहे पढ़िए, खेलिए, सोचिए, सपने देखिए, जो जीमें आये कीजिए। उपवासके आरंभमें कभी-कभी तेज सिरदर्द होता है, कभी कमजोरी-सी मालूम होती है, मूर्च्छा-सी आने लगती है, कभी दिनमें नींद भी आती है और रात बिना नींदके बीतती है। इन लक्षणोंसे केवल असुविधा होती है, अन्यथा इनका कोई विशेष महत्व नहीं है।

८--उपवास करते समय अकेले रहें या फिर अपरिचितोंके संग। उपवासको जो नहीं समझते, वे आपको उपवास करते देखकर क्या कहेंगे और उसपर आपपर कितना बुरा प्रभाव पड़ेगा, आंप इसे समझ सकते हैं। इसलिए लंबा उपवास करते समय अपने स्थानसे दूर किसी गाँवमें, जंगल या पहाड़पर या समुद्रके किनारे चले जाना चाहिए। फूसकी कुटियामें रहना चाहिए। नदीमें नावपर भी रहा जा सकता है। इससे पुरानी जगहसे नयी जगहका जो अधिक आकर्षण रहता है, उसका लाभ मिलता है। जहाँ लोग दिन-भर खाते-पीते हैं और दिन-रात खाने-पीनेकी बातें करते हों, वहाँसे हट जाना ही अच्छा है।

किसी ऐसे मित्रके सिवा, जो उपवासके महत्वोंको समझता हो, किसी दूसरेको अपने उपवासका इरादा भी नहीं बतलाना चाहिए।

९--प्रकृतिके निकट रहो।

मौजसे धूप-स्नान लो, कभी-कभी पेड़ू पर मिट्टीकी पट्टी भी रखो।

जमीनपर चित लेटो और समुद्रकी लहरों तथा झरनोंके जलसे खेलो। घासपर सोनेकी आदत डालो, फिर देखो कि प्रकृति तुम्हें कितना बल देती है। जंगलके वृक्षकी पत्तियोंकी गंध, सरसराती हुई हवा, पृथ्वीकी सन्निकटता, सूर्यका प्रकाश--ये सभी मिलकर शरीरमें चेतनता, सजीवता, शांति एवं प्राण भरने लगते हैं।

१०--उपवासके साथ और चीजें न मिलाओ। कसरत, जल-चिकित्सा सभी ठीक हैं, पर उपवासके समय नहीं। इनसे खतरा उत्पन्न हो सकता है। एक भाई अपने गठिया रोगके निवारणके लिए किसीसे पूछकर उपवास करने लगे, फिर उसीमें किसीकी सलाहसे वाष्प-स्नान भी लेने लगे और उनकी मृत्यु हो गयी। यदि वह केवल उपवास करते या भाप-स्नान लेते, तो संभवतः अच्छे हो जाते। दोनोंके साथ होनेके कारण शरीरसे जहर तेजीसे निकलनेके साथ-साथ शक्ति भी अधिक नष्ट हुई और रोगीकी मृत्यु हो गयी।

उपवासके समय अपनी शक्ति आजमानेके लिए कुछ करतब दिखानेकी मूर्खता मत करो। उपवासमें शक्ति बचानी चाहिए। उसे खर्च नहीं करना चाहिए।

११--उपवास आरंभ करनेके एक सप्ताह पहलेसे केवल ऐसा भोजन करना चाहिए कि कब्ज न रहे। इसके लिए फल-तरकारियोंके साथ थोड़ा मेवा और कुछ रोटी लेना ठीक होगा। इस भोजनको खूब चबा-चबाकर खाना चाहिए और भोजनमें अनेकता कम करते जाना चाहिए।

१२--उपवासके समय उपवासके बजाय किसी अन्य चीजकी ही बात सोचो। उपवासके समय न अपने उपवासपर ही ध्यान ज़ाय और न भोजनका ही ख्याल करो। जबतक शरीरमें गंदगी रहेगी, भूख नहीं लगेगी और जब भूख नहीं है, तो भोजनकी बात क्यों? गाना जानते हो, तो गाओ, कुछ बजा सकते हो, तो बजाओ। गाना सुनो भी। बच्चोंके साथ खेलो। कुछ पढ़ो--दर्शन, कविता या चरित्रको ऊंचा उठानेवाली, मजबूत

बनानेवाली कोई पुस्तक ।

१ ३--उपवासके आरंभिक तीन दिन विशेषरूपसे शरीरकी सफाईमें लगाओ । इसके लिए भाप-नहान लो, एनिमाका उपयोग करो, खूब पानी पीओ, कसरत करो, गहरी सांस लो, गरम पानीमें नींबू मिलाकर पीओ, सारे बदनको हथेलीसे रगड़-रगड़कर स्नान करो ।

साधारणतः उपवासके पहले और तीसरे दिन भाप लेनी चाहिए, एक सप्ताहतक नित्य एनिमा लेना चाहिए, सारे बदनको रोज सबेरे रगड़ना चाहिए । दोपहरके बाद पेटकी या सारे शरीरकी मालिश करनी चाहिए और संध्याको गहरी सांस लेते हुए थोड़ा-थोड़ा टहलना चाहिए । दिनभरमें दो-ढाई सेर पानी पीना चाहिए । अच्छा हो कि एक बारमें केवल पावभर पानी पीया जाय । नीबू या उस जातिके फलका रस पानीमें मिलाकर लिया जाय, तो ठीक है । दिनभरमें यह आध पावसे अधिक नहीं लेना चाहिए । यह रस शरीरके शोधनमें सहायक होगा । अंगूरका रस भी लिया जा सकता है । अनानासका रस भी कामकी चीज है । अंगूरके रसमें पौष्टिक तत्व अधिक हैं, अतः इसके बजाय मिल सके तो संतरेका रस ही लेना चाहिए । ये रस पेट साफ रखनेमें भी सहायक होते हैं ।

दस दिनका या इससे छोटा उपवास हो तो, रोज़ तीन संतरेतक खाये जा सकते हैं, पर उनके खाते वक्त रस चूसकर खुज्झा फेंक देना चाहिए ।

१४--जलका कोई कठिन प्रयोग मत करो, पर तबियत हो तो जैसा फादर कनाइपने बतलाया है, आप ओस पड़ी हुई हरी दूबपर टहल सकते हैं। जस्ट या कूनेका बताया स्नान कर सकते हैं । फुहारेके नीचे नहाया जा सकता है और ये सब प्रयोग यकायक खूब ठंढे-ठंढे पानीसे नहानेसे अच्छे रहेंगे ।

साफ पानी पाव-पावभरकी मात्रामें दिनभर पीते रहो । तबियत न भी चाहती हो, तो पानी पीनेकी आदत डालो ।

१५--उपवासमें कभी कोई चिकित्सा न लो । किसी

मानसोपचारकसे तुम्हें कोई सहायता मिले, तो ले सकते हो, अन्यथा और किसी चिकित्साकी उपवासमें जरूरत नहीं है । रीढ़ और शरीरकी मालिशकी जरूरत होती है; पर वह किसीसे भी ली जा सकती है । दौड़-धूपके खेल पहले तीन दिनतक खेले जा सकते हैं । यदि केवल एक सप्ताहका ही उपवास करना हो, तो पूरे उपवासपर भी खेले जा सकते हैं । साधारणतः उपवासमें ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिए, जिसमें शरीर, मन या आत्माको कोई खास मेहनत पड़े ।

१६--कोई खास तकलीफ हो, तो उसका उपचार उपवासके समय ही होना चाहिए । यदि यकृत (जिगर) काम नहीं करता, तो उसे जगानेका यही समय है । उसपर गरम सेंक दीजिए, ऐसी कसरतें कीजिए, जिनमें कमरेसे मुड़ना पड़े एवं झुकना पड़े--जिस किसी भी रीतिसे यकृतको लाभ पहुंच सके इस समय वह कीजिए ।

नाड़ियोंसे संबंधित, अग्निमांद्य, हृदय-रोग, श्वास-नलिकाके रोग शीघ्र ही चले जाते हैं । यदि कुछ भी न किया जाय, तो प्रकृति स्वयं सब करेगी, पर खुद भी कुछ करनेसे संतोष होता है और तात्कालिक कष्ट दूर होते हैं ।

१७--उपवास-कालमें उत्पन्न लक्षणोंकी चिंता मत करो । कभी सिरदर्द होगा, कभी चक्कर आयेंगे । इन लक्षणोंके बारेमें समझो कि इस बुराईके बाद अच्छाई आनेवाली है । यदि पहले बुराईमें न पड़े होते तो यह बुराई देखनी न पड़ती । यह सब शरीरमें इकट्ठी गंदगीके निकलनेकी प्रतिक्रियास्वरूप होता है । इसका होना आवश्यक है । यह सब होनेपर समझना चाहिए कि उपवास अपना काम कर रहा है । इसका होना यह बतलाता है कि उपवासकी आपको आवश्यकता थी ।

उपवासमें वजन औसतन एक पौंड रोज घटता है, पर उपवास तोड़नेके बाद इसी तेजीसे बढ़ता भी है, कभी-कभी रोजाना डेढ़-दो पौंडतक। उपवासमें नब्जकी गति भी मंद हो जाती है, यह स्वाभाविक है;

अतः उपवासमें कुछ भी कष्ट हो, तो उसकी चिंता करनेके बजाय उनपर हँसना ही उचित है।

१८--उपवासके लाभकी प्रतीति उपवासमें नहीं, वरन् जब उपवास खतम हो जाता है, उसकी याद बिसर जाती है, तब होती है। पर इसमें संदेह नहीं कि उपवास-तपस्याका पूरा-पूरा फल मनुष्यको अपने शरीरकी नवीनता, उसमें नवस्फूर्ति एवं आत्मोन्नतिके रूपमें मिलता है।

१९--भोजनके एक ग्रास और ईश-प्रार्थनाके साथ उपवास तोड़ो।

लंबे उपवासको तोड़नेमें ही कठिनाई होती है। दुनियामें वापस आना, दुनिया छोड़नेसे अधिक कठिन प्रतीत होता है। जब आप फिर खाना शुरू करेंगे, तो पेट बहुत खाली-खाली-सा लगेगा, लेकिन उपवासद्वारा इस अनुभवमें आनंदकी प्रतीति होने लग जानी चाहिए।

उपवास किसी एक चीजसे तोड़ना चाहिए। दूसरे भोजनमें दो चीजें हो सकती हैं। तीसरे, चौथे, पांचवें और छठेंमें तीन। जिस किसी भी चीजके खानेका जोरसे मन करता हो, खाना चाहिए और उसे घंटेभरतक स्वाद ले लेकर चबाना चाहिए। फिर छह घंटेतक कुछ भी न खाना चाहिए। उपवास चोकर-समेत आटेकी रोटीके एक टुकड़े, सेव या थोड़े दलिये या उबाले हुए मटर या कोई चबायी जा सकनेवाली खुज्झेवाली चीजसे तोड़ा जा सकता है, ताकि उसपर आंतें अपना पूरा-पूरा काम कर सकें।

मैंने अपना उपवास थोड़े-से भुने हुए गेहुंओंसे तोड़ा था। पहला ग्रास मैंने सात सौ बार चबाया था और इन थोड़े-से गेहुंओंको चबानेमें मुझे चालीस मिनट लगे थे।

उपवासके बाद थोड़े भोजनसे ही अधिक पोषण मिलता है, उपवाससे पहलेके आधे भोजनसे ही पूरा काम मजेमें चलता है।

उपवास-कालमें आप जिस कार्यके लिए जीना चाहते हैं, वह स्पष्ट हो जायेगा। अब भोजन करें, तो याद रखें, क्योंकि भोजनद्वारा जो शक्ति

आपको मिलेगी, उसीके सहारे आपकी आत्मा अपना संदेश इस पृथ्वीपर सुनायेगी। प्रत्येक ग्रासके साथ प्रकाश जुड़ा हुआ देखिए। जो शक्ति भोजनसे आपको मिलनेवाली है, उनके द्वारा हृदय-कामनाकी पूर्ति होते देखिए।

२०--केवल एक सप्ताहके उपवासने ही लोगोंका दृष्टिकोण बदल दिया है। उन्हें शरीर, मस्तिष्क, हृदय और आत्मा-इन सभी क्षेत्रोंमें स्पष्ट उन्नति प्रतीत हुई है। पहले जो चीजें अस्पष्ट थीं, वे साफ दिखाई देने लगती हैं। झूठी, अप्राकृतिक, व्यर्थ और कुरूप चीजें अपने स्वाभाविक स्थान-विस्मृतिके गर्तमें चली जाती हैं। आदमी स्वयंको पा लेता है, दुनिया पीछे रह जाती है। सत्य उसे आकर्षित करता है और प्यार परास्त। पुराने बंधन, जो आत्मानुभूतिके पहले उसे बांधे रहते हैं और जब सच्चे रहनेमें भी उसे डर लगता था, टूट जाते हैं। उसका नया जन्म होता है। ईमानदारीके स्वर्गमें वह रहने लगता है। दुनिया उसे भूल जा सकती है और उसके साथ अजनबीका-सा व्यवहार कर सकती है। पुराने दोस्त उसे छोड़ दे सकते हैं, पर साथ ही हृदयसे प्यार करनेवाले नये दोस्त मिल जा सकते हैं। विजय-उपवासके बाद सभी आदतों, इच्छाओं, आकांक्षाओं, विचारों एवं प्यारमें भी आमूल परिवर्तन हो सकता है।

केवल ईश्वर नित्य है, शाश्वत है, अपरिवर्तनीय है--यह आप गहराईसे अनुभव करेंगे। लोगोंको डूबते-से दिखाई देंगे, पर विजय-उपवास वह डुबकी है, जो आपको ईश्वरके पास ले जाकर बिठा देगी।

(५)

उपवास

साधारणतः सभी रोगी शिकायत करते हैं कि भूख मारी गयी है। संभवतः भूख बन्द होनेको वे बहुत भयंकर रोग समझते हैं, पर यह समझ बिलकुल गलत है। प्रकृति रोग की दशामें इसलिए भूख हर लेती है कि उस समय उपवास आवश्यक होता है। रोगी यह नहीं समझता कि सच्ची भूख लौटनेतक खानेकी इच्छाका लोप तो उसके लिए एक बड़ा वरदान है। भूखका बंद होना, शरीरके विजातीय द्रव्यसे लदे होने तथा उसकी शक्ति क्षीण करने अथवा दाह पैदा करनेवाले पदार्थको शरीरसे निकालनेकी, कुदरतकी कोशिशकी निशानी है। भूखका बंद होना इस बातका भी लक्षण है कि पाचन-शक्ति इतनी कमजोर हो गयी है कि भोजनकी, ग्रहण की जानेवाली मात्राका पचा सकना उसके बूतेके बाहरकी बात है, पर औषधोपचारक सदियोंसे साधारण जनतामें यह संस्कार फैलाते आये हैं कि भूखका बंद होना और दो-चार वक्त न खा सकना खतरनाक है और इस हालतसे छुटकारा पानेके लिए कोई-न-कोई चूरन-फंकी या बलवर्द्धक (टॉनिक) ओषधि लेना आवश्यक है। ये दवाइयां झूठी और नकली भूख पैदा कर सकती हैं और पहले किये गये भोजनके शरीरमें सड़ते, उफनते एवं शरीरको हानिकारक विषसे भरते रहनेपर भी आदमी इनके सहारे अपने आमाशयको भोजनसे लाद सकता है।

कुशल है कि जब जुकाम, सिरदर्द, अवसाद एवं अन्य तीव्र रोगोंसे

दो-एक वक्त न खाकर अथवा दो-चार दिनमें एक छोटे-से उपवासकी मार्फत नीरोग होनेकी एक आश्चर्यजनक रीति सीख रहे हैं। शरीरको भोजनके भार एवं विषसे मुक्त करनेका यही अति सरल, पुरअसर और तत्काल फल देनेवाला उपाय है। शरीरको सही हालतमें रखनेके लिए दरअसल कितने थोड़े खानेकी जरूरत है, यह जानकर हमें बड़ा आश्चर्य होगा। आज तो अधिकांश लोगोंका शरीर भोजनाधिक्यसे विषमय हो रहा है और उनमें ऐसे लोगोंकी तादाद कम नहीं है कि जो अपनी समझमें बहुत थोड़ा खाते हैं।

पंद्रहवी शताब्दीमें इटलीकी वेनिस नगरीमें पैदा हुए प्राकृतिक चिकित्सक कारनेरो नामक एक बड़े प्रचारकने अपने जीवनद्वारा इस कथनको सिद्ध कियाहै। चासील वर्षकी उम्रमें कारनेरो भोजनाधिक्य, शराबखोरी एवं अनियमित जीवन व्यतीत करनेके कारण उत्पन्न हुए जीर्ण रोगोंसे मरनेकी तैयारी कर रहे थे। सौभाग्यवश प्रकृतिने उन्हें थोड़ी सूझ दी, जिसके सहारे उन्होंने उस समय, जब कोई भी दवा उन्हें फायदा नहीं पहुंचा पाती थी, आदतोंमें सुधार करके अर्थात् अपने नित्यके खान-पानकी मात्राको कम करके अपनेको स्वस्थ करनेकी कोशिश की।

लगभग चालीस वर्षतक उन्होंने छह छटांकसे अधिक ठोस भोजन नहीं किया। फिर उन्होंने अपने ऐसे मित्रों एवं संबंधियोंकी बात मानकर, जो यह समझ रहे थे कि कारनेरो अपनेको भूखों मार रहे हैं, अपने भोजनकी मात्रामें दो-चार तोले और बढ़ा दी। फलतः उनकी शारीरिक और मानसिक अवस्था बिगड़ने लगी और उसमें तभी सुधार हुआ, जब वह पुनः छह छटांक भोजनके रास्तेपर आ गये।

अस्सी सालकी उम्रमें उन्होंने स्वास्थ्य एवं विशेषतया अपने अनुभवोंके संबंधमें कई किताबें लिखीं। उनकी सबसे मूल्यवान् कृति, जो अब भी छपती जाती है और खूब पढ़ी जाती है, उन्होंने सौ वर्षकी उम्रके बाद लिखी थी। इस महात्माकी जीवनी एवं भोजन और उपवास-संबंधी अनुभव प्रत्येक स्कूलोंमें पढ़ाये जाने चाहिए।

प्रकृतिकी रोग-निवारणकी जो रीतियाँ अब तक सामने हैं, उनमें उपवास निस्संदेह सबसे शक्तिशाली है और संयोग कि सबसे किफ़ायती भी। इसका अधिक प्रचार न होनेकी वजह है साधारण जनता और उपचारकोंका यह विश्वास कि थोड़े समयके लिए भी भोजन छोड़ देनेसे मनुष्यकी शक्ति क्षीण हो जाती है।

इस भ्रमका क्या कारण है ? लोगोंका यह मानना कि खाने-पीनेसे ही शक्तिका संबंध है, पर है यह गलत। जीवन-शक्ति अथवा प्राणका, जो कि हमारी सारी शक्तियोंका एकमात्र स्रोत है, भोजन, जल, ओषधि अथवा उत्तेजक पेयों अथवा शक्तिवर्द्धक रसायनोंसे कोई ताल्लुक नहीं है। यह शक्ति हमें सभी शक्तियोंके मूलसे, संसारको रचनेवाली एवं जीवोंको बुद्धि प्रदान करनेवाली उस शक्तिसे, जिसे लोग ईश्वर, प्रकृति, परब्रह्म, परम आत्मा, जीवनेच्छा आदि भिन्न-भिन्न नामोंसे पुकारते हैं, मिलती है। यदि लोगोंको इस बातकी सच्ची अनुभूति हो जाय, तो फिर वे दो-चार वक्तका भोजन छोड़ने या कोई छोटा-बड़ा उपवास करनेसे डरेंगे नहीं।

उपवासकी रोग-नाशक शक्तिके रहस्य एवं रोगके उत्पन्न होनेके कारण, दोनोंमें पूर्ण सामंजस्य है। यदि रोग रक्त एवं शरीरमें स्थित रसोंमें विकार उत्पन्न होने एवं शरीरमें विजातीय द्रव्य एकत्र हो जानेसे होता है, तो यह सिद्ध किया जा सकता है कि उपवास शरीरमें इकट्ठी हुई गंदगी एवं कचरेको साफ करता है। उपवासके रास्तेकी ओर बढ़नेमें सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि खानेकी पुरानी आदत जरा मुश्किलसे छूट पाती है, इसलिए उपवासके शुरू-शुरूमें तीन-चार दिन जरा मुश्किलसे बीतते हैं। इस समय अक्सर लोगोंको भोजनकी याद आती रहती है, चिड़चिड़ापन बढ़ जाता है, मानसिक सुस्ती मालूम होती है, नींद कम आती है और सिरदर्द आदि भी हो जाता है। आदतोंमें खानेकी आदत ही सबसे पुरानी और गहरी है।

तीन-चार दिन बिता दिये, तो फिर आगेका उपवास निबाहना सरल-से-सरल हो जाता है; क्योंकि तीसरे-चौथे दिनके बाद पाचन-यंत्रकी

श्लैष्मिक कलाएं गंदगी निकालना शुरू करती हैं और पाचन एवं रस-परिपाकका कार्य बिलकुल स्थगित हो जाता है । आमाशय एवं आंतोंकी श्लैष्मिक कला, जो साधारणतः पचे हुए भोजन को सोखनेमें लगी रहती है, उपवास-कालमें शरीरकी गंदगीको निकालनेका काम करती रहती है, ठीक वैसे ही जैसे कि दबानेपर स्पंज । इस समय मुंहसे बदबूदार सांस आने लगती है, जबान मैली हो जाती है । इस समय पाचन-यंत्र भोजन पचाने अथवा पचे भोज़नको अंगमें लगानेके अयोग्य होता है; इसलिए भूख भी बंद हो जाती है ।

उपवासमें शरीरको अंदर एकत्र भोजनका उपयोग शुरू करना होता है, पर इसके पहले शरीरकी बहुत-सी गंदगी और विष निकल जाते हैं । जब हम यह जान लेते हैं, कि हमारी सारी-की-सारी पाचन-प्रणाली, जो करीब छब्बीस फुट लम्बी होती है, जिनका आरंभ मुख और अंत गुदाद्वार हैं, ऐसी मांसपेशियों और ग्रंथियोंसे सुसज्जित है, जिनका काम गंदगी निकालना है, तब लंबे उपवासका शोधक प्रभाव अच्छी तरह समझमें आ जाता है । उपवाससे कमजोरी आनेके डरकी तो कोई गुंजाइश ही नहीं है; क्योंकि हजारों रोगियोंको कराये गये उपवासका यह अनुभव है, जिनमें चालीस-पचास और साठ-आठ दिनका उपवास करनेवाले भी कई थे । रोगीको, रोगने यदि उपदासके पहलें ही बहुत कमजोर और दुबला नहीं कर दिया है, तो उपवासमें कोई ऐसी जाहिर कमजोरी नहीं आती ।

मेरे एक रोगीने उनचास दिनका एक उपवास किया था, जिसके अंतमें उसने अपनेको उपवासके आरंभसे निश्चित तौर पर अधिक शक्तिशाली पाया । उपवासके अंतिम दिनतक वह दूर-दूरतक टहलने जाता रहा । उपवास-कालमें ही उसके जीर्ण रोग, जो खाने एवं आपरेशन करानेके फलस्वरूप उत्पन्न हो गये थे, लगभग पूर्णतः शांत हो गये ।

एक-से-तीन दिनके छोटे उपवासोंद्वारा रोगोंके जानेमें कोई विशेष सहायता नहीं मिलती; क्योंकि इतना समय तो आंतोंको, श्लैष्मिक कलाकी गंदगी निकालनेका कार्य आरंभ करनेमें ही लग जाता है । फिर ज्यों ही कुछ

खाया जाता है, उनका कार्य उलटी दिशामें चलने लगता है और सफाईका काम रुक जाता है। सात दिनका उपवास तो एक छोटा शोधक उपवास कहा जायेगा। छोटे उपवास करनेके बाद ही आदमी बड़े उपवास करनेकी हिम्मत करता है।

अन्य अनेक कार्योंकी भांति ही उपवासकी सफलता भी मनुष्यके मानसिक भावोंके ठीक रहनेपर निर्भर है। अगर कोई डरता रहे कि उपवासका असर उसके लिए नुकसानदेह होगा और उसे कमजोर कर देगा, तो उसमें मानसिक एवं स्नायविक शिथिलता पैदा हो जायेगी, जो उसके शरीरको जरूर ही नुकसान पहुँचायेगी और बरअक्स इसके अगर आदमीको पूरा-पूरा विश्वास हो कि समझकर किया गया उपवास कभी कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता और खाने और न खाने दोनों ही हालतोंमें जीवन-शक्ति शरीरमें समान रूपसे प्रवाहित होती रहती है, तो उपवासमें शरीरकी गंदगी और विष आसानीसे निकलते रहते हैं। भोजन कोई भी हो, वह उपवासद्वारा होनेवाली सफाईके महान् कार्यके रास्तेका रोड़ा ही सिद्ध होगा।

प्राकृतिक चिकित्सकोंकी देखरेखमें अबतक लाखों रोगियोंने छोटे और बहुत लंबे उपवास भी किये हैं, साधारणतः रोगियोंको किसी प्रकारकी क्षति पहुँचनेकी बात नहीं सुनी जाती। उपवास-कालमें रोगीकी मानसिक और शारीरिक अवस्थाका नित्य निरीक्षण करते रहना चाहिए और लक्षणोंसे उपवास तोड़नेकी आवश्यकता प्रतीत होनेपर उसे तुड़वा देना चाहिए।

यदि उपवास-कालमें रोगीका वजन बहुत तेजीसे घटे और रोगी बेहद दुबला हो जाये, रोगीको अवसाद देरतक घेरे रहे, अथवा कुछ ऐसे मानसिक लक्षण उत्पन्न हो जायें कि जिनसे मालूम हो कि रोगी आपेमें नहीं है अथवा उसे कुछ इस संसारकी बाहरी बातें सुनाई दे रही हों, तो ऐसे समय उपवासका जारी रखना खतरेसे खाली नहीं है। अंतिम अवस्था रोगीकी असाधारण मानसिक स्थितिकी सूचक है; जो शरीर एवं दिमागकी

असाधारण ऋणात्मकताके कारण उत्पन्न होती है। यदि रोगी उपवासके बीचमें कभी-कभी पैदा होनेवाली कमजोरीसे डरने लगे अथवा चिंतित हो जाय, तो भी उपवास तुड़वा देना चाहिए; क्योंकि चिंता और डरका नाशक प्रभाव उपवाससे प्राप्त होनेवाले लाभसे बढ़ जा सकता है। ऐसे रोगियोंको लंबा उपवास आगे चलकर फिर ऐसे समय कराना चाहिए जब कि वे जीवनके प्रति अधिक आशायुक्त हों एवं उनका मन स्थिर हो।

रोगीको कभी यह नहीं बताना चाहिए कि उपवास कितने दिन चलेगा। निश्चित रूपसे यह समझमें आ जानेपर भी कि रोगीको दो, तीन अथवा चार सप्ताहके उपवासकी जरूरत है, रोगीको यह नहीं बताया जाता कि उसे कितने दिनका उपवास करना है। प्रायः उसे यही कहा जाता है कि उपवासका शरीरपर क्या असर होता है, यह देखकर ही उपवासकी अवधि निश्चित होगी। वह कुछ दिन चल सकता है अथवा कई हफ्ते। इससे रोगीको यह तसल्ली हो जाती है कि उपवास इतना बड़ा नहीं कराया जायेगा, जो उसकी शक्तिके बाहर हो। एक लंबी अवधितक उपवास करनेकी बात मनमें लेकर उपवास करनेकी अपेक्षा रोज उपवास की मियाद बढ़ाते जाना ज्यादा आसान है।

जीभ साफ, श्वास दुर्गंधरहित होने एवं स्वाभाविक भूख लगनेतक उपवास करनेकी बात बहुत खतरनाक है। बहुत बार देखा गया है कि रोगीको चार अथवा पांच सप्ताहका उपवास करानेपर भी उसकी पाचन-प्रणालीकी गंदगी पूरी-पूरी साफ नहीं हुई है और न रोगीको तनिक भी भूख लगी है। कई बार तो ऐसा प्रतीत हुआ है कि अमुक रोगीको चाहे जितना बड़ा उपवास कराया जाय, उसकी जीभ और श्वास साफ होनेकी आशा नहीं होती।

ऐसी दशामें पूरा-पूरा इच्छित फल प्राप्त होनेके पहले ही उपवास तोड़ देना और उपवाससे आयी हुई दुर्बलताके दूर होनेके बाद फिर उपवास करना अधिक निरापद है। संभव है, पाचन-प्रणाली इतनी बिगड़ गयी हो कि एक लंबे उपवासद्वारा उसका एकबारगी सुधर जाना संभव न हो।